मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी

दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

क़ौम के निर्माण में हमारा हिस्सा

"मुसलमानों की ज़िम्मेदारी इस देश में नारों, तमन्नाओं, इच्छाओं से कहीं ज़्यादा और नाज़ुक है। अगर वो अपनी ज़िन्दगी से इस्लाम का नाम सिर्फ़ फ़ायदा हासिल करने के लिये करते रहे तो उनको बड़ी से बड़ी ताक़त और बड़ी से बड़ी हुकूमत भी नहीं बचा सकती है। अगर कोई इस्लामी देश इस मामले में लापरवाही करता है तो उसको भी तबाही का सामना करना पड़ेगा। अल्लाह तआला का किसी ख़ास देश और क़ौम से रिश्ता नहीं। उसने किसी क़ौम से केवल क़ौमी बुनियाद पर कामयाबी देने का कोई वादा नहीं किया। उसका साफ़ ऐलान है कि "न तुम्हारी उम्मीद से कुछ होने वाला है और न किताब वालों की, जो बुराई करेगा उसका बदला पायेगा।" (सूरह निसाः 123) उसकी मदद का अगर वादा है तो सिर्फ़ ईमान वालों और नेक लोगों पर। उसके लिये अगर हम हालात में बदलाव के इच्छुक और इज़्ज़त व सलामती चाहने वाले हैं तो हमें उस सीधे रास्ते पर चलना होगा, जो अल्लाह ने हमारे लिये हमेशा–हमेशा के लिये बताया है। वो रास्ता ये है कि हम ज़िम्मेदार और शरीफ़ इन्सानों और सच्चे–पक्के मुसलमानों की तरह ज़िन्दगी गुज़ारे और शरीअत व सुन्नत की रहनुमाई में अपनी ज़िन्दगी की उन सभी कमियों को दूर करें जो एक मुसलमान की ज़िन्दगी से कोई समानता नहीं रखतीं, ख़ास तौर पर उन कमियों और कमज़ोरियों को जिनकी वजह से ग़ैर मुस्लिम, इस्लाम की साफ़, रोशन और पाकीज़ा शिक्षाओं से शक में पड़ रहे हैं।

इन्सान की फ़ितरत वही है जो पहले थी। ख़ुलूस, मुहब्बत, ख़िदमत, हमदर्दी, किरदार और अच्छे आमाल आज भी उसकी निगाह में उसी तरह एहतराम के क़ाबिल हैं जिस तरह पहले थे। बहुत से लोग समझते हैं कि दुनिया के बाज़ार और नीलामी की इस मन्डी में जहां उसूल व किरदार कौड़ियों के भाव बिकते हैं, वहां इन चीज़ों का अब कोई ख़रीददार नहीं। लेकिन हक़ तो ये है कि सौदा जितना कम होता है उसकी अहमियत उतनी ही ज़्यादा होती है। आज पूरी मानवता इस अमृत के एक–एक घूंट को पीने के लिये तरस रही है। अगर मुसलमान आगे बढ़कर अपनी कथनी व करनी से और अपने किरदार से अपने इस मुकम्मल और दिलकश अमन का सही प्रदर्शन करें तो कोई वजह नहीं है कि आज ये शिफ़ा का नुस्ख़ा हमारी मसीहाई से इनकार कर दे।"

मौलाना सैय्यद मुहम्मदुल हसनी रह0

بسم الله الرحمن الرحيم

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:२ फ़रवरी २०१४ ई० वर्ष:६

संरक्षक: हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी (अध्यक्ष – दारे अरफ़ात)

निरीक्षक
मौ० वाज़ेह रशीद हसनी नदवी
जनरल सेकेरेट्री– दारे अरफ़ात

सम्पादक
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी
अब्दुस्सुबहान नाखुदा नदवी
महमूद हसन हसनी नदवी

मुद्रक
मो0 हसन नदवी

सह सम्पादक
मो0 नफ़ीस ख़ाँ नदवी

E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

इस अंक में:

भ्रष्टाचार.....२
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

किरदार का जौहर.....३
मौलाना शमसुल हक़ नदवी

इस्लामी अक़ीदा..... ५
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

तशहहुद में उंगली से इशारा.....७
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

शफ़ाअत का कुरआनी विचार.....९
अब्दुस्सुब्हान नाखुदा नदवी

आत्महत्या – कारण व समाधान.....११
अहसन अब्दुल हक़ नदवी

धार्मिक शिक्षा और मुस्लिम औरतें.....१४
सैय्यद अनवर शाह बग़दादी

यहूदियों की फ़ितरत.....१६
मुहम्मद यूसुफ़ रामपुरी

अनथक प्रयास.....१७
तारिक़ अनवर

अल्लाह की मदद की बुनियादी शर्तें.....१९
मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

शर्मिन्दगी का एहसास.....२०
अबुल अब्बास ख़ाँ

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,य0पी0.229001

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला ख़ाँ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

प्रति अंक 10रू

वार्षिक 100रू0

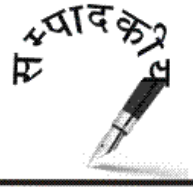

सम्पादकीय

भ्रष्टाचार

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

आज जिस चीज़ ने पूरी दुनिया को तबाही के रास्ते पर डाल दिया है वो भ्रष्टाचार है। जिसको अपनाने के लिये ख़ूबसूरत से ख़ूबसूरत विषयों की तलाश की जाती है। ये बुरी आदत व्यक्तिगत स्तर पर भी है और सामूहिक स्तर पर भी, जमाअत के स्तर पर भी और राष्ट्रीय स्तर पर भी। हर जगह इसके कारिन्दे नज़र आयेंगे जो अपने लिये या अपनी टीम के लिये या अपने देश के लिये भ्रष्टाचार मे लिप्त नज़र आयेंगे। ऐसे लोग संकुचित दृष्टि से देखते हैं। उनके सामने मानवता की भलाई नहीं होती, उनको केवल अपना या अपनी जमाअत का या अपने देश का फ़ायदा नज़र आता है। इसके लिये चाहे किसी के साथ कुछ भी करना पड़े। कितने ग़रीबों के घर उजड़ जायें, यतीमों और बेवाओं के दिलों पर आरे चलें, उनको बहरहाल अपनी जेब भरनी है। अगर ग़ौर किया जाये तो इसमें आपको स्टेप नज़र आयेगे। एक भ्रष्टाचार वो है जो एक आदमी व्यक्तिगत रूप से करता है, उसका दायरा बहुत बड़ा नहीं होता, कहीं इस में भी अन्दर का इन्सान मर चुका होता है। वो इन्सानों के दिमाग़ से नहीं सोचता वो जानवरों के दिमाग़ से सोचता है। जिसमें इसको सिर्फ़ अपना फ़ायदा नज़र आता है। फिर वो इसके लिये किसी भी तरह का भ्रष्टाचार करने के लिये तैयार रहता है। इसका दूसरा चरण सामूहिक भ्रष्टाचार का है। एक जमाअत या एक पार्टी के लोग अपनी पार्टी के लिये सबकुछ करने को तैयार रहते हैं। और वो इसमें सारे नियमों को ताक़ पर रख देते हैं। केवल पार्टी के लाभ पर नज़र होती है। इस भ्रष्टाचार का दायरा फैल जाता है और पूरे देश को इस नुक़सान को भुगतना पड़ता है। और पार्टी के हित का लुभावना नाम देकर इसमें हर प्रकार का भ्रष्टाचार किया जाता है, इसके लिये चाहे देश भी दांव पर लग जाये, तो पार्टी के हित के लिये इसकी भी कोशिश की जाती है। इसलिये कि इससे हक़ीक़त में पार्टी के नेताओं के व्यक्तिगत लाभ जुड़े होते हैं।

तीसरा चरण देश के लिये भ्रष्टाचार का है। इसको आम तौर पर भ्रष्टाचार नहीं माना जाता। हालांकि अस्ल में ये भ्रष्टाचार की सबसे घिनावनी शक्ल है। इसका दायरा पूरी दुनिया को अपनी लपेट में ले लेता है। ये भ्रष्टाचार ताक़त के ज़ोर पर किया जाता है। लुभावना नाम देकर किया जाता है। आंखों मे धूल झोंककर किया जाता है। इसमें पूरे–पूरे देश हड़प लिये जाते हैं। उनको कैप्चर कर लिया जाता है और किसी के मुंह में ज़बान नहीं होती जो खोले। ग़ौर किया जाये तो हक़ीक़त ये है कि इसके पीठ पीछे ज़ातिगत लाभ जुड़े होते हैं जो अधिकतर देश के शासक वर्ग को प्राप्त होते हैं। और उसका कुछ हिस्सा जनता को भी दे दिया जाता है ताकि उनकी ज़बाने भी न खुल सकें।

भष्टाचार की ये विभिन्न शक्लें हैं जो पूरी दुनिया में प्रचलित हैं। इसका सबसे बड़ा कारण ये है कि हर व्यक्ति स्वार्थी है। कोई व्यक्तिगत रूप से विभिन्न तरीक़ों से अपनी जेब भर कर अलग हो जाता है, और कौन उसके लिये सफ़बन्दी करता है और बड़े पैमाने पर अपने लिये दौलत व इज़्ज़त समेटना चाहता है। अख़लाक़ की बुलन्दी, इन्सानियत दोस्ती, दर्द व मुहब्बत, ग़म व त्याग, अमानतदारी जैसी विशेषतांए धीरे–धीरे उठती जा रही हैं। ये पूरी दुनिया के लिये एक बड़े ख़तरे की बात है। इस समय इसकी अत्यधिक आवश्यकता है कि हालात को बदलने की कोशिश की जाये और किसी छोटी से छोटी कोशिश को भी बेहैसियत न समझा जाये। बूंद–बूंद से सागर भरता है। क्या पता कि अलग–अलग इलाक़ो में की जाने वाली ये कोशिशें और अलग–अलग जगहों से उपलब्ध होने वाली ये ईंटें भ्रष्टाचार के लिये दीवार बन जायें, लेकिन इसमें हर एक को अपनी ज़िम्मेदारी पूरी करने की आवश्यकता है।

किरदार का जौहर

मौलाना शमसुल हक़ नदवी

मुसलमान इस समय तरह–तरह की समस्याओं का सामना कर रहा है और अलग–अलग ख़तरों से घिरा हुआ है। हर जगह और हर मोड़ पर एक नयी मुश्किल है और ये कोई नयी बात नहीं है। इस्लाम के इतिहास में बार–बार ऐसे हालात सामने आते रहे हैं। वो जिनको रोशनी से बैर है और जो आरम्भ से ही इस्लाम विरोधी साज़िशें करते रहे हैं, ऐसी कि कुरआन ने उनकी मक्कारी व साज़िश को इन शब्दों में बयान किया है:

"मानों वो तरकीबें ऐसी ग़ज़ब की थीं कि उनसे पहाड़ भी टल जायें।" (इब्राहीम: 46)

जब कुरआन मजीद इन साज़िशों की हक़ीक़त इस तरह बयान करे तो क्या कहा जा सकता है। कभी–कभी तो ऐसा लगने लगता है कि शायद इसका चिराग़ बुझ जायेगा। लेकिन क्योंकि इस उम्मत का वजूद क़यामत तक के लिये है अतः इसकी कश्ती तूफ़ानी लहरों में घिर–घिर कर किनारे को पाती रही हैं। हर नाजुक घड़ी में कुछ ऐसे मर्द सामने आते रहे हैं जिन्होंने अपनी समझदारी, अपने किरदार, अपने सब्र और जोश के बजाय होश से काम लेकर इस उम्मत के भलाई की उम्मत होने की लाज रखी और बिगड़े–बिफरे हुओं को न केवल ठन्डा किया बल्कि अपनी बातचीत के अन्दाज़ से अपना गुलाम बना लिया।

अगर ज़रा सूझ–बूझ से काम लिया जाये तो मालूम होगा कि एक मुसलमान अपनी प्रकृति एवं आवश्यक आवश्यकताओं से तो एक आम इन्सान की हैसियत रखता है। उन सभी हालात से उसका सामना होता है जिनसे दूसरे इन्सानों को गुज़रना पड़ता है। संक्षेप में ये कि वो अपने इन्सानी वजूद में प्रकृति का वैसा ही अधीन है जैसे कि उसकी तरह के दूसरे इन्सान। ज़माने का इन्क़िलाब और रोज़गार के मौक़े उसके साथ कोई रिआयत नहीं बरत सकते केवल इसलिये कि इसका कोई विशेष नाम है और इसका संबंध किसी कुल विशेष से है। बहरहाल मोमिन बन्दे को इन्सान की हैसियत से उन सभी समस्याओं व परेशानियों का सामना करना पड़ेगा जिससे दूसरे इन्सान गुज़रते हैं।

लेकिन मोमिन बन्दा दूसरे इन्सानों से इस आधार पर बहुत श्रेष्ठ है कि जब वो उन समस्याओं व परेशानियों में सब्र व ज़ब्त से काम लेता है और उसको अपने मालिक की तरफ़ से समझता है। उसको उस पर न केवल ये कि अगली दुनिया का सवाब मिलता है बल्कि इस दुनिया में भी उसको दिल का सुकून और इत्मिनान हासिल हो जाता है। जिसको कुरआन मजीद ने इस तरह बयान किया है:

"अगर तुम बेआराम होते तो जिस तरह तुम बेआराम होते उसी तरह वो भी बेआराम होते और तुम खुदा से ऐसी–ऐसी उम्मीदें रखते हो जो वो नहीं रख सकते।" और "सुन रखो कि खुदा की याद से दिल को आराम मिलता है।" (अर्रादः 28)

ये खुशी सिर्फ़ मोमिन बन्दे को मिलती है। इससे मालूम हुआ कि मुसलमान दो हैसियतों से बटा हुआ है। उसकी एक हैसियत तो इन्सान की है और दूसरी ईमान के वजूद की है।

इसकी दूसरी हैसियत यानि ईमान के वजूद की हैसियत अपने अन्दर एक पैग़ाम रखती है। जो नबियों का पैग़ाम है। मोमिन बन्दे का ये ईमानी वजूद उसको दुनिया के सभी इन्सानों से श्रेष्ठ कर देता है। एक मुसलमान की ख़ालिस तौहीद उसे इन्सान का बन्दा और माल व दौलत का बन्दा होने से अलग कर देता है। उसकी मानवता, देशप्रेम व रंग व नस्ल भेद की श्रेष्ठता की जड़ काट देती है। वो ज़िन्दगी का एक पैग़ाम रखता है। उसकी ज़िन्दगी का अस्ल मक़सद यही पैग़ाम है। उसी की ख़ातिर जीता है

और उसी की ख़ातिर मरता है। जीवन के मूल्य चाहे बदल जायें और मानव जीवन में चाहे कितनी ही बड़ी क्रान्ति न आ जाये लेकिन उसके अन्दर कोई बदलाव नहीं आता। वो न ख़ुद अपने आप का बदलता है। उस मुसलमान की मिसाल क़ुरआन पाक में इस तरह बयान की गयी है:

"उसकी मिसाल ऐसे पेड़ की है जिसकी जड़े जमी हों और शाखें आसमान छू रही हों।" (इब्राहीमः 24)

मोमिन बन्दे की यही श्रेष्ठता है जोकि उसके अन्दर इन्सानियत का दर्द और मुहब्बत की जोत लगाता है और उसको मानवता के निर्माण की सोच में बेचैन रखता है। पूरी दुनिया में अकेले इस उम्मत को ये ज़िम्मेदारी सौंपी गयी है कि वो सृष्टि के निरीक्षण का काम करे, गिरतों को उठाये, बिगड़ों को सुधारे और उनकी योग्यताओं को एकत्र करने का प्रयत्न करे। हालांकि वो ज़माने के रूख़ पर न चले बल्कि इन्सानियत के काफ़िले को उसी रूख़ पर चलाने की फ़िक्र में लगा रहे जिसमें उसके सुधार व भलाई का राज़ छिपा है और उसी समय ये संभव है जब ये ख़ुद अपने आप को इस सांचे में ढ़ाल ले जिस में इस का पहला काफ़िला ढला था और जिसके अख़लाक़ व किरदार ने मुल्कों को विजयी करने से पहले दिलों को जीत लिया।

इस वक़्त पूरी इन्सानी दुनिया जिस बेचैनी के दौर से गुज़र रही है और वो ज़ुलमत के ऐसे अन्धेरे में गुम है जिस में हाथ को हाथ न सुझाई देता।

दुनिया में इस समय ज्ञान व कला में उन्नति का जो रिकार्ड स्थापित किया है उसके बारे में कभी ख़्याल भी नहीं किया जा सकता था। बल्कि आने वाली दुनिया के राहत व आराम का ज़िक्र और वही व आप स0अ0 की ज़बान से उसकी कोई ख़ुशख़बरी दी जाती थी तो उसका मज़ाक़ उड़ाया जाता था। सोचने की बात है कि जब ख़ाक़ का पुतला तरक़्क़ी करके इस दर्जे को पहुंच सकता है तो उस ख़ालिक़ का वादा कैसे ग़लत हो सकता है। किन्तु इन सभी उन्नतियों में वो तत्व शामिल नहीं थे जिससे ये उन्नतियां रहमत बनती हैं इसलिये वो सारी उन्नतियां जो इन्सान की राहत के लिये थीं उसके लिये ऐसी मुसीबत बनी है जिसका कोई हल नहीं। सब कुछ है लेकिन चैन नही है। इन्सान ख़ुद अपने जैसे इन्सानों का शिकार बना हुआ है। कुछ नेक रूहें जब सुकून की तलाश में बेचैन फिरती हैं तो उनको उनकी तालीम में सुकून मिलता है जो उनके रब ने उनके लिये अपने पाक कलाम में अपने नबी के ज़रिये से उतारी हैं। और मुहम्मद स0अ0 ने उसमें बिना छेड़छाड़ उसे इन्सानों तक पहुंचाया है बल्कि उनको बरत कर और अमल करके दिखाया है। वो नेक रूहें हर तरफ़ से आस तोड़कर उनको पढ़ती हैं और उनका अध्ययन करती हैं तो उनको यहीं चैन नज़र आता है और वो अपने को उन्हीं तालीम के हवाले कर देती हैं यानि इस्लाम क़ुबूल कर लेती हैं।

अब अगर हम मुसलमान उन इस्लामी तालीमों को अपने अख़लाक़ व किरदार, चाल–ढ़ाल, मामले व बर्ताव में प्रदर्शन करें तो फिर किसी तेज़ी भूली भटकी रूहें, उसकी तरफ़ बढ़ेंगी और उसका नहीं लगाया जा सकता है।

इसलिये ये हमारी सबसे पहली ज़िम्मेदारी है कि हम इन तालीमों का अमली नमूना पेश करें जिनको किसी आलिम ने पेश किया तो हज़ारों लाखो इन्सानों ने अंधेरों से उतर कर इस रोशनी में पनाह ली है।

हालात व वाक़यात बताते हैं कि इन्सानियत अभी बिल्कुल मुर्दा नहीं हुई है कुछ मुख़लिस व बाकिरदार लोग इन्सानियत की आवाज़ लगायीं तो उनकी आवाज़ पश्चिमी सभ्यता और मीडिया की हया सोज़, इन्सानियत सोज़ नश्रियात ने ख़ुदग़र्ज़ी व स्वार्थ को इस हद तक पहुंचा दिया जिसने समाज व ख़ानदान की व्यवस्था को ग़लत शब्द की तरह मिटा दिया है, फिर सुकून व चैन मिले तो कहां से। इसीलिये बेचैन रूहें सुकून की तलाश में इस्लाम के सायेदार पेड़ की तरफ़ बढ़ रहीं है जिनका ज़िक्र मीडिया में कम आता है लिहाज़ा उन सारी साज़िशों और इस्लाम दुश्मनी के मन्सूबों के बावजूद हमें मायूसी का शिकार नहीं होना चाहिये बल्कि..... हवा तो है तंग व तेज़ लेकिन चिराग़ अपना जल रहा है..... वो मर्द दरवेश कि जिसको ख़ुदा ने दिया है अन्दाज़े ख़ुस्रूवाना पर अमल करना चाहिये। कामयाबी अल्लाह के हाथ में और उसकी सुन्नत यही है कि वो अपने इन मुख़लिस बन्दों की मदद फ़रमाता है।

इस्लामी अक़ीदा

कुरआन व हदीस की रोशनी में

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

इस्लाम में अक़ीदे को बुनियादी हैसियत मिली हुई है। अक़ीदा अगर ठीक न हो तो बड़े से बड़े काम बेकार हो कर रह जाते हैं। अक़ीदे में भी सबसे अहम और बुनियादी अक़ीदा तौहीद का है। बाक़ी अक़ीदे इसी तौहीद के अक़ीदे से निकलते हैं। तौहीद का अक़ीदा अगर ठीक है तो बाक़ी सारे अक़ीदे का ठीक होना भी आसान हो जाता है।

तौहीदः तौहीद (एकेश्वरवाद) कहते हैं एक मानने को। इसका संबंध अल्लाह तआला की ज़ात से है। कायनात का ज़र्रा–ज़र्रा पुकार कर कहता है कि इन सभी चीज़ों का पैदा करने वाला एक है। सारा निज़ाम उसी के हाथ में है। वो जिस तरह चाहता है अपनी मर्ज़ी चलाता है। उसके अच्छे–अच्छे नाम हैं। उन नामों से इसको पुकारा जाये और सिर्फ़ उसी की बन्दगी की जाये। इबादत के सारे आमाल उसी के साथ ख़ास हैं। किसी को इबादत में उसके साथ शरीक न किया जाये। सिर्फ़ उसी के आगे सर झुकाया जाये और उसी को मुश्किलें दूर करने वाला और ज़रूरतें पूरी करने वाला समझा जाये।

अल्लाह तआला ने दुनिया बनायी। और उसमें आसमान को बनाया। हज़रत आदम अलै0 सबसे पहले इन्सान हैं जिनको अपनी बीवी हज़रत हव्वा के साथ दुनिया में आसमान से उतारा गया और ये कह दिया गया कि तुम और तुम्हारी औलाद जब तक एक अल्लाह को मानती रहेगी, उस वक़्त तक वो कामयाब होती रहेगी। और जब उस रास्ते से हटेगी, अल्लाह के अलावा दूसरों को पूजने लगेगी तो उसका ठिकाना जहन्नम होगा।

शैतान जो इन्सान का सदा का दुश्मन है उसने अल्लाह से पहले ही दिन इजाज़त ले ली कि मैं इन्सान को बहकाऊंगा और उसको ग़लत रास्ते पर डालने की हर मुमकिन कोशिश करूंगा। अल्लाह ने फ़रमाया कि जा, अपने सब हथकन्डे अपना ले, लेकिन मेरे ख़ास बन्दों पर तेरा कुछ ज़ोर न चलेगा। उस दिन से शैतान की सबसे बड़ी कोशिश यही है कि वो इन्सान को शिर्क में डाल दे। एक अल्लाह की बन्दगी से हटा दे। इसलिये कि यही इन्सान की सबसे बड़ी गुमराही है कि वो अपने पैदा करने वाले के हक़ को भूल जाये और शिर्क और कुफ़्र में पड़कर इसके नतीजे में सदा की जहन्नम का ईंधन बने।

अल्लाह का इन्सान पर ये बड़ा करम है कि उसने हमेशा बन्दों को सही रास्ते पर लाने के लिये और एक अल्लाह की बन्दगी में दाख़िल करने के लिये हर दौर में रसूल भेजे। हर रसूल की दावत यही थी (एक अल्लाह के अलावा तुम्हारा कोई माबूद नहीं) उन रसूलों में सबसे आख़िरी और सबसे श्रेष्ठ रसूल हज़रत मुहम्मद स0अ0 को सारी दुनिया के लिये और क़यामत तक के लिये भेजा गया। जिस वक़्त आप स0अ0 तश्रीफ़ लाये उस वक़्त मक्का के मुश्रिक एक अल्लाह को मानते तो थे लेकिन उसके साथ सैंकड़ो खुदाओं को शरीक करते थे। उनकी बन्दगी करते थे। नज़र व नियाज़ मानते थे। आप स0अ0 ने हर तरह के शिर्क से मना किया और इसको सबसे बड़ा गुनाह बताया और कुरआन मजीद में साफ़–साफ़ ऐलान कर दिया गयाः "अल्लाह उसको माफ़ नहीं करता कि उसके साथ शरीक किया जाये और उसके अलावा जिसको चाहेगा माफ़ कर देगा।" (अन्निसाः 116)

आप स0अ0 के आने का अस्ल मक़सद तौहीद की दावत देना था और तौहीद की ग़लतफ़हमियों को दूर करना था। आप स0अ0 ने किसी ज़माने में शिर्क का साथ गवारा न फ़रमाया। मक्का के मुश्रिक कहते थे कि आप स0अ0 हमारे माबूदों की काट करना छोड़ दे तो हमारी सारी दुश्मनी ख़त्म हो जायेगी। हम आपकी हर बात मानने को तैयार हैं। आप स0अ0 ने एक लम्हे के लिये भी इसमें

ढील नहीं दी और सारी ज़िन्दगी तौहीद की हक़ीक़त बयान फ़रमाते रहे और खुदा और बन्दे का फ़र्क़ बताते रहे।

खुद आप स0अ0 को जब अपनी ज़ात के बारे में ये डर हुआ कि कहीं उम्मत आपको इसी तरह खुदाई का दर्जा न दे दे जिस तरह ईसाईयों ने हज़रत ईसा अलै0 के साथ किया, तो आप स0अ0 ने ऐलान के साथ ये बात कही:

"मुझे इस तरह आगे न बढ़ाओ जिस तरह नसारा ने ईसा बिन मरियम के साथ किया, यक़ीनन मैं अल्लाह का बन्दा और उसका रसूल हूं तो तुम कहो कि अल्लाह के बन्दे और रसूल हैं।"

और दुनिया से जाने से पहले ज़बान पर ये कलिमे जारी हुए, "अल्लाह तआला यहूद और नसारा पर लानत करे, उन्होंने अपने नबियों की क़ब्र को सजदागाह बना लिया।"

आप स0अ0 ने किस तरह तौहीद को साफ़–साफ़ बयान फ़रमाया; इसके लिये पहले मक्का के मुश्रिकों के अक़ीदे को समझना होगा, और उनके शिर्क को जानना पड़ेगा, जिसमें आप स0अ0 ने सुधार किया। फिर कुरआन मजीद और आप स0अ0 की हदीस की रोशनी में तौहीद की हक़ीक़त साफ़ होगी।

मक्का के मुश्रिकों का अक़ीदा: आप स0अ0 का आना यद्यपि पूरी दुनिया के लिये और सदा के लिये है फिर भी आप स0अ0 का प्रथम सम्बोधन मक्का वालों के लिये था। आप स0अ0 ने जब उनके सामने तौहीद की दावत रखी तो उन्होंने साफ़ कहा कि हम अस्ल में इबादत के लायक़ अल्लाह ही को समझते हैं, लेकिन दूसरों की इबादत हम इसलिये करते हैं कि वो हमें अल्लाह से क़रीब कर देंगे। कुरआन मजीद में इस बात का ज़िक्र मौजूद है, "हम उनकी बन्दगी इसलिये करते हैं ताकि ये हमें अल्लाह से मर्तबे में क़रीब कर दें।" (सूरह ज़ुमर: 3)

इससे साफ़ मालूम होता है कि वो अल्लाह को खुदा समझते थे और उसके रब होने को मानते थे लेकिन इबादत में वो औरों को भी शरीक करते थे। इसका भी इतिहास हमें एक सही हदीस से मालूम होता है कि वो जिन बुतों को पूजते थे, उनके बारे में हदीस में है कि ये सब नूह अलै0 की क़ौम के नेक लोग थे। जब इनकी मृत्यु हो गयी तो शैतान ने लोगों को ये बात समझायी कि ये नेक लोग जिस जगह बैठते थे वहां पत्थर लगाओ और पत्थरों को उनके नाम से पुकारो, तो उन्होंने ऐसा ही किया, फिर जब ये लोग भी मर गये और उनसे इल्म उठ गया तो उनकी औलादों ने इन पत्थरों और यादगारों की पूजा करना शुरू कर दिया। (सही बुख़ारी)

ये बुत परस्ती का इतिहास है। मगर इस बुत परस्ती के साथ वो यक़ीन रखते कि अल्लाह ही ज़मीन और आसमान का पैदा करने वाला है। करने वाली ज़ात उसी की है। उनके इस अक़ीदे का ज़िक्र कुरआन मजीद में मौजूद है:

"पूछिये कि ज़मीन और ज़मीन में जो कुछ है वो किसका है (बताओ) अगर तुम इल्म रखते हो? वो झट से यही कहेंगे कि अल्लाह का। फिर भी तुम ध्यान नहीं रखते। पूछिये सातों आसमानों और अर्शे अज़ीम का मालिक कौन है? वो फ़ौरन यही कहेंगे कि अल्लाह के हैं। कहिये फिर भी तुम डर नहीं रखते? पूछिये कि हर चीज़ की बादशाहत किसके हाथ में है और वो पनाह देता है और उसके मुक़ाबले में कोई पनाह नहीं दे सकता (बताओ) अगर तुम जानते हो? वो फ़ौरन यही कहेंगे कि अल्लाह के हाथ में। आप कह दीजिये कि फिर कहां का जादू तुम पर चल जाता है?!" (सूरह मोमिनून: 84–88)

इसका नतीजा था कि जब वो किसी बड़ी मुसीबत में पड़ जाते तो अल्लाह ही को पुकारते फिर जब मुसीबत टल जाती तो दूसरों की पूजा करने लगते। कुरआन मजीद में उनके इस तरीक़े का ज़िक्र भी मौजूद है:

"यहां तक कि जब कश्ती में सवार होते हो और खुशगवार हवा के ज़रिये वो लोगों को लेकर चलती है और लोग उसमें मगन हो जाते हैं तो एक सख़्त आंधी उनको आ लेती है और हर तरफ़ से मौजें उन पर उठती हैं और वो समझ जाते हैं कि वो इसमें घिर गये तो बन्दगी में ध्यानमग्न होकर वो अल्लाह को पुकारने लगते हैं कि अगर तूने हमें इससे बचा लिया तो हम ज़रूर शुक्र करने वालों में से होंगे।"

.....शेष पेज 8 पर

तशह्हुद में उंगली से इशारा

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

तशह्हुद में इशारा करने के बारे में हनफ़ियों के बहुत से शेखों में शुरूआत में भिन्नता थी। लेकिन बाद में उस पर सहमति हो गयी कि इशारा करना साबित है, सुन्नत और सवाब का काम है। दूसरे इमामों के यहां भी इशारा करना सवाब का काम है। हनफ़ियों के यहां उसके चार तरीक़े बताये गये हैं:

1– कलिमा शहादत कहते वक़्त अंगूठे और बीच की उंगली से घेरा बना लिया जाये और छोटी उंगली और बीच की उंगली को मोड़ लिया जाये और शहादत की उंगली से इशारा किया जाये।

2– या छोटी उंगली, उसके बाद वाली उंगली और बीच की उंगली को मोड़ लिया जाये और अंगूठे के ऊपरी हिस्से को बीच की उंगली के बीच के पोढ़ से लगा दिया जाये और शहादत की उंगली से इशारा किया जाये।

3– सभी उंगलियों को मोड़ लिया जाये और शहादत की उंगली से इशारा किया जाये।

4– सभी उंगलियों को फैला कर रखा जाये और उसी हालत में शहादत की उंगली से इशारा किया जाये।

इशारे की ये कैफ़ियत बतायी गयी है चारों तरीक़ों में "ला इलाहा" कहते हुए शहादत की उंगली उठायी जाये और "इल्लल्लाह" कहते हुए रख दी जाये। फिर आख़ीर तक उसी तरह रखे रहे। और इशारा न करे।

लगभग इसी से मिलती जुलती तफ़सीलें इमाम नववी रह0 ने शाफ़ई मसलक की भी लिखी हैं।

इनमें से हर तरीक़े क्रमवार निम्नलिखित हैं:

हज़रत वायल इब्ने हजर रज़ि0 से मरवी है फ़रमाते हैं: मैंने कहा: मैं नबी करीम स0अ0 की नमाज़ को ग़ौर से देखूंगा (इसी हदीस में आगे है) फिर आप बैठ गये और बायें पैर को बिछा लिया और बायां हाथ अपनी बायीं रान पर रखा और अपनी दाहिनी कोहनी को रान से अलग रखा और दो उंगलियों को मोड़ लिया और एक घेरा बना लिया और मैंने आपको इस तरह करते देखा और बशर ने अंगूठे और बीच की उंगली से घेरा बनाया और शहादत की उंगली से इशारा किया।

दूसरे तरीक़े की दलील

मुस्लिम शरीफ़ की ये रिवायत है:

हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि0 से मरवी है कि आंहज़रत स0अ0 जब नमाज़ में बैठते थे दाहिने हाथ को दाहिने गुठने पर रख लेते थे और तिरपन का उक़्द कर लेते और शहादत की उंगली से इशारा करते थे।

शराह मसलन अल्लामा तैबी इत्यादि ने तिरपन के उक़्द की कैफ़ियत वही बयान की है जो ऊपर नम्बर 2 पर बयान की गयी है।

हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि0 फ़रमाते हैं: आंहज़रत स0अ0 जब नमाज़ में बैठते तो दाहिनी हथेली दायीं रान पर रख लेते और सभी उंगलियां मोड़ लेते और उंगूठे से लगी उंगली से इशारा करते।

चौथे तरीक़े की दलील

"आंहज़रत स0अ0 ने बायां हाथ बायीं रान पर रखा और दायां हाथ दाहिनी रान पर रखा और शहादत की उंगली से इशारा किया और अंगूठा बीच की उंगली पर रखा।"

चूंकि रिवायत में सिर्फ़ रखने का ज़िक्र है उससे मालूम होता है कि उंगलियां मोड़ी नहीं थीं।

इशारे का वक़्त

हनफ़ियों के नज़दीक़ जैसा कि ऊपर आ चुका है ला इलाहा कहते हुए शहादत की उंगली उठायी जायेगी जबकि कुछ लोगों के निकट शुरू से आख़िर तक किया जायेगा। इमाम मालिक और इमाम शाफ़ई से भी इसी तरह का कथन मनकूल है। इन लोगों की दलील ये हदीस है।

"आसिम इब्ने कलीब अपने वालिद और वो उनके दादा से रिवायत करते हैं फ़रमाया: मैं नबी करीम स0अ0

के पास इस हाल में दाख़िल हुआ कि आप नमाज़ पढ़ रहे थे, और आप ने बायें हाथ को बायीं रान पर और दाहिने हाथ को दाहिनी रान पर रखा हुआ था और अपनी उंगलियां मोड़े हुए थे, और शहादत की उंगली फैला रखी थी। तबरानी की रिवायत में है कि शहादत की उंगली से इशारा कर रहे थे और फ़रमाते थेः ऐ दिलों को फेरने वाले मेरे दिल को अपने दीन पर क़ायम रख।"

लेकिन ये रिवायत बक़ौल तिरमिज़ी मुनकर है। फिर तिरमिज़ी में शहादत की उंगली फैलाने का ज़िक्र है। वही अस्ल रिवायत है और उसकी दलील से इनकार नहीं किया जा सकता। तबरानी में इशारा करने का ज़िक्र है। दोनों रवायतें एक ही हैं। लिहाजा वरीयता तिरमिज़ी की रिवायत को होनी चाहिये। महसूस ऐसा होता है कि किसी रावी ने रिवायत बिल माना करते हुए "बसत" (फैलाना) की ताबीर "युशीर" (इशारा करना) से कर दी है।

बहरहाल उन लोगों के पास यही एक रिवायत है जो मुनकर होने के साथ–साथ इशारा करने पर स्पष्ट भी नहीं है।

इन लोगों के जवाब में हनफ़ी निम्नलिखित हदीसों से दलील देते हैं।

"हज़रत माज़ बिन जबल रज़ि0 से मरवी है फ़रमाते हैंः और आंहज़रत स0अ0 जब आख़िरी नमाज़ में बैठते तो बायें रान पर टेक लगाते थे तो और आप स0अ0 का दाहिना हाथ दाहिनी रान पर होता था और जब दुआ फ़रमाते तो इशारा करते थे।"

यहां इशारे का वक़्त दुआ को बताया गया है। मुस्लिम की एक रिवायत में दुआ का मतलब तशह्हुद बताया गया है।

"नबी करीम स0अ0 जब दुआ यानि तशह्हुद के लिये बैठते थे।"

मालूम हुआ कि तशह्हुद के वक़्त इशारा करना है। इसीलिये हज़रत थानवी रह0 फ़रमाते हैंः "दुआ की तफ़सीर तशह्हुद के साथ है, जिससे मालूम होता है कि इशारा सिर्फ़ तहलील के वक़्त था। बस तहलील के ख़त्म पर इशारा भी ख़त्म हो जायेगा।"

"हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि0 से रिवायत है नबी करीम स0अ0 जब दुआ करते थे तो उंगली से इशारा करते थे और इसको हरकत नही देते थे।"

"हज़रत मालिक इब्ने नुमैर रज़ि0 की रिवायत में हैः अपनी शहादत की उंगली उठाकर दुआ करने की हालत में इसको कुछ मोड़ लिया था।"

मालूम हुआ कि पहले उठाया, फिर दुआ करते वक़्त झुका दिया।

कुछ लोग लगातार हरकत देने के लिये हज़रत वाएल रज़ि0 की इस हदीस से भी दलील देते हैं।

"फिर अपनी उंगली उठायी, फिर मैंने देखा कि आप इसको हरकत दे रहे हैं, इसके ज़रिये दुआ कर रहे हैं।"

लेकिन ये हदीस ऊपर बयान की हुई हज़रत इब्ने ज़ुबैर रज़ि0 की रिवायत के मुख़ालिफ़ है। जबकि दोनों रिवायतें सही हैं। लिहाज़ा दोनों में जोड़ की शक्ल ये हो सकती है कि हरकत देने का मतलब इशारा करना लिया जाये न कि लगातार हरकत देना। इमाम बैहिक़ी ने यही वजह बयान की है।

इसकी गुंजाइश है कि हरकत देने का मतलब इशारा करना हो न कि लगातार हरकत देना। इस तरह वो लोग हज़रत इब्ने ज़ुबैर रज़ि0 की रिवायत के अनुसार हो जायेगी।

बहरहाल सच्ची बात ये है कि ज़्यादा साफ़ दलीलें दोनों पक्षों में से किसी के पास भी नहीं है। अस्ल इशारा करना है। कई तरीक़े आये हैं। शुरू से आख़िर तक इशारा होगा या सिर्फ़ तशह्हुद पढ़ते वक़्त। इसमें मामूली सा विरोधाभास है। इस छोटी सी बात को बड़ा बनाना अक़्ल मन्दी नहीं हो सकती। वल्लाहु आलम

शेष : इस्लामी अक़ीदा .....

इन आयतों से साफ़ ज़ाहिर होता है कि वो अल्लाह को रब मानते थे और बड़ी हद तक "तौहीद" के मानने वाले थे मगर अल्लाह के साथ दूसरों की भी इबादत करते थे और उनके लिये नज़र व नियाज़ करते थे। और इसको अल्लाह से नज़दीकी का ज़रिया समझते थे। इसीलिये उनको "मुश्रिक" कहा गया। ये चीज़ इस्तलाह में "शिर्क फ़िल उलूहियत" या "शिर्क फ़िल इबादह" है। यानि उलूहियत या इबादत में शिर्क कहलाती है, जबकि तौहीद के लिये ज़रूरी है कि रबूबियत में तौहीद के साथ–साथ उलूहियत में भी तौहीद हो और सिफ़ात में भी तौहीद हो। आगे तौहीद की इन तीनों किस्मों का बयान किया जायेगा। .....(जारी)

शफ़ाअत का कुरानी विचार

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

शफ़ाअत (सिफ़ारिश) का अक़ीदा जमहूर उम्मत के निकट एक मुकम्मल अक़ीदा है। किताब व सुन्नत पर ग़ौर करने से ये मालूम होता है कि क़यामत के दिन अल्लाह के नेक बन्दे जिनमें सर्वप्रथम नबी और फ़रिश्ते हैं सिफ़ारिश करेंगे, जिनकी सिफ़ारिश क़ुबूल भी कर ली जायेगी। उनमें सबसे श्रेष्ठ स्थान हुज़ूर–ए–अकरम स0अ0 का होगा। ये सारी बातें हर तरह के शक व शुब्हे से ऊपर हैं। लेकिन दो बुनियादी व उसूली बातें याद रखना ज़रूरी है; पहली बात ये है कि अल्लाह की इजाज़त के बग़ैर कोई सिफ़ारिश नहीं कर सकेगा और दूसरी बात ये है कि किसी को भी मुतलक़ा सिफ़ारिश की आज्ञा न होगी। मुतलक़ा सिफ़ारिश का मतलब ये है कि किसी को भी इस बात की इजाज़त नहीं होगी कि वो बग़ैर किसी हद व क़ैद के जिसकी भी चाहे सिफ़ारिश करे और उसकी सिफ़ारिश मान ली जाये।

ये बात भी तय है कि सिफ़ारिश के ज़रिये अल्लाह तआला के फ़ैसलों को बदला नहीं जा सकता है। अल्लाह तआला का हर फ़ैसला लागू होकर रहेगा। हां कुछ फ़ैसलों को लागू करने के लिये सिफ़ारिश का तरीक़ा अख़्तियार किया जायेगा। जिसके द्वारा सिफ़ारिश करने वाले का सम्मान होगा। इस क्रम में क़ुरआन मजीद ने कुछ साफ़–साफ़ हिदायतें दी हैं, जिनको समझने से पूरा मामला साफ़ हो जाता है। अल्लाह तआला फ़रमाता है: "आप कह दीजिये की सारी सिफ़ारिश सिर्फ़ अल्लाह का हक़ है, आसमान व ज़मीन की बादशाहत उसी की है, फिर तुम सबको उसी के पास लौटाया जायेगा।" (ज़ुमर: 33)

इस मुबारक आयत से ये मालूम होता है कि हक़ केवल अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त का है। वो जिसके बारे में जो चाहे फ़ैसला करे, कोई दूसरा सिफ़ारिश के ज़रिये उसके ज्ञान को प्रभावित नहीं कर सकता, न उसके फ़ैसले को। फ़ैसला अकेले उसी का होगा, कोई उसके फ़ैसले में शरीक नहीं होगा। ये आयत "अक़ीदा–ए–शिफ़ाअत" में बुनियाद की हैसियत रखती है। दूसरी हिदायत ये है कि अल्लाह तआला की इजाज़त के बग़ैर कोई सिफ़ारिश नहीं कर सकेगा।

"कौन है जो उसकी बारगाह में सिफ़ारिश कर सके, हां उसकी इजाज़त हो तो बात दूसरी है।" (बक़रा: 255)

बल्कि उसकी बारगाह में किसी की बोलने की भी जुर्रत न होगी।

"जिस दिन रूह व फ़रिश्त सफ़ बनाकर खड़े होंगे, कोई बोलेगा तक नहीं, हां जिसे रहमान इजाज़त दे और वो ठीक–ठीक बोले।" (अन्नबा: 38)

अल्लाह की ये इजाज़त सशर्त होगी। यानि इजाज़त मिलने पर भी उस सिफ़ारिश का क़ुबूल किया जाना ज़रूरी नहीं। बल्कि इस बात पर अल्लाह का राज़ी हो जाना भी ज़रूरी है।

"जिस दिन सिफ़ारिश फ़ायदा नहीं पहुंचायेगी हां जिसे अल्लाह इजाज़त दे और उसकी बात पर राज़ी भी हो जाये।" (ताहा: 106)

अल्लाह जिसके हक़ में सिफ़ारिश की इजाज़त दे और जिससे राज़ी हो बस उसी के लिये सिफ़ारिश हो सकती है।

"आसमानों में कितने ऐसे फ़रिश्ते हैं यानि तमाम फ़रिश्ते जिनकी सिफ़ारिश कुछ भी काम न देगी मगर उस वक़्त जब अल्लाह इजाज़त दे जिसके हक़ में चाहे और उस पर राज़ी भी रहे।" (नज्म: 26)

क्योंकि अल्लाह का फ़ैसला ये है कि वो कभी कुफ़्र पर राज़ी नहीं होता: "और अपने बन्दों के कुफ़्र पर वो हरगिज़ राज़ी नहीं।" (ज़ुमर: 8)

लिहाज़ा काफ़िरों के हक़ में सिफ़ारिश सिरे से क़ुबूल नहीं की जायेगी: "हर इन्सानी जान अपनी करतूतों की वजह से गिरफ़्तार रहेगी सिवाये असहाबे यमीन के, यानि जन्नत वालों के। वो अपने नेक कामों की वजह से हर तरह की पकड़ से आज़ाद होंगे। वो जन्नत में होंगे और मुजरिमों के बारे में बात करेंगे, पूछेंगे कि तुम्हें किस चीज़ ने जहन्नम भेजा? वो बोलेंगे: हम नमाज़ी नहीं थे और न ज़रूरतमन्दों को खिलाते थे, उल्टी सीधी हांकने वालों के

साथ हम भी मस्त हो जाते और बदले के दिन को हम झुठलाया करते, यहां तक कि मौत ने हमें दबोच लिया, और हमारा ये हाल हो गया, तो ऐसे लोगों को सिफ़ारिश करने वालों की सिफ़ारिश फ़ायदा नहीं पहुंचायेगी।"

(मुदस्सिरः 38–48)

एक और जगह इरशाद हैः "फ़रिश्ते उसी की सिफ़ारिश कर सकते हैं जिसके हक़ में अल्लाह राज़ी हो और वो अल्लाह के ख़ौफ़ से लरज़ां और तरसां रहते हैं।"

ये गुनाहो से माफ़ी की सिफ़ारिश का इस्लामी विचार है जो कुरआन करीम से बिल्कुल साफ़–साफ़ मालूम होता है। इसके मुक़ाबले में गुनाहों से माफ़ी की सिफ़ारिश का एक मुश्रिकाना विचार भी है जिसकी कुरआन करीम ने सख़्ती के साथ काट की है। मक्का के मुश्रिक इसी सिफ़ारिश का यक़ीन रखते थे। इस अक़ीदे की बुनियाद इस फ़र्जी के उसूल पर स्थापित है कि अल्लाह ने इस कायनात में अपने कुछ मददगार रखे हैं जिनको खुश करने से अल्लाह तआला ज़रूर खुश होगा। सीधे अल्लाह को राज़ी करने की कोई ज़रूरत नहीं। कुरआन करीम ने इसे यूं साफ़ किया हैः "ये लोग अल्लाह के अलावा ऐसों की इबादत करते हैं जो न तो इनको नुक़सान पहुंचा सके न फ़ायदा पहुंचा सके और वो कहते हैं कि ये माबूद अल्लाह के नज़दीक हमारी सिफ़ारिश करने वाले हैं आप कहिये क्या तुम अल्लाह को वो बातें जो वो आसमानों और ज़मीनों में नहीं जानता, याानि जिसका कोई वजूद ही नहीं है, पाक है वो और बुलन्दतर है उस शिर्क से जो ये करते हैं।" (यूनुसः 18)

इस मुश्रिकाना अक़ीदे की काट करते हुए कुरआन करीम कहता हैः "उन्होंने जिस किसी को भी शरीक किया होगा उनमें कोई उनकी सिफ़ारिश करने वाला नहीं होगा बल्कि उल्टे वो अपने साथ शरीक करने वाले का इनकार करेंगे।" (रोम : 13)

इसी ग़लत अक़ीदे से मिलता जुलता ये अक़ीदा भी है कि हम जो चाहें करें, फ़लां हमें बचा लेंगे। ये एकदम मुश्रिकाना सोच है जो अफ़सोस है कि बहुत से जाहिल मुसलमानों में भी पायी जाती है। बहुत से बेवकूफ़ उसे इस्लामी "शिफ़ाअत का अक़ीदा" से जोड़ने की भी कोशिश करते हैं। ये सिफ़ारिश प्रत्यक्ष है जो क़रीब–क़रीब इबादत के अर्थ में है। इसका हक़ अकेले अल्लाह को है और कुरआन मजीद में इस तरह की सिफ़ारिश से बिल्कुल इनकार हैः "ऐ लोगों जो ईमान लाये हो जो हमने तुम्हें दे रखा है, उसमें से ख़र्च करो इससे पहले कि वो दिन आ जाये जिस दिन न क्रय–विक्रय होगा न दोस्ती काम आयेगी और न सिफ़ारिश होगी।" (बकराः 254)

ग़ौर किया जाये यहां पर बात ईमान वालों से कही जा रही है यानि ईमान वालों में से अगर कोई ऐसा अक़ीदा रखे तो कुरआन के एतबार से उसकी सिरे से गुंजाइश नहीं। ऐसा सिफ़ारिश करने वाला कि जिसके हवाले से सबकुछ किया जाये सिर्फ़ अल्लाह है। उसके अलावा कोई नहीं। अल्लाह तआला का इरशाद हैः "आप इस कुरआन से उनको डराइये जो इसका ख़ौफ़ रखते हैं कि उनको अपने रब के पास इकट्ठा किया जायेगा, उनके लिये अल्लाह के अलावा न कोई वली है, और न सिफ़ारिशी, ताकि ये लोग अल्लाह से डरते रहें।" (अलईनामः 51)

अफ़सोस की बहुत से लोग नबी करीम स0अ0 के नाम पर अपनी नातों में या तक़रीरों में ऐसी बातें कह जाते हैं जिससे सिफ़ारिश के संबंध से ग़लत सोच पैदा होती है। यानि हम जो चाहे करते रहें, हमें अज़ाब नहीं होगा, हम आपका दामन थाम लेंगे फिर दोज़ख़ की क्या मिसाल कि हमें छू भी सके। दूसरे शब्दों में मानो ये कि फिर अल्लाह हमसे कैसे नाराज़ रह सकता है? उसे राज़ी होना ही पड़ेगा! यानि बात को इस तरह गुंजाइश बनाकर पेश किया जाता है कि एक आम सुनने वाला ये सोचने पर मजबूर हो जाता है कि अल्लाह की उतारी हुई शरीअत, खुदाई सीमाएं, रसूलुल्लाह स0अ0 की दी हुई नसीहतें कुछ भी नहीं, बस मनचाही ज़िन्दगी गुज़ारी जाये और आप स0अ0 की सिफ़ारिश के नाम पर खुद आप स0अ0 की लायी हुई शरीअत का रौंद दिया जाये। क्या आप स0अ0 ने अपनी शफ़ाअत वाली हदीसों को बयान करके उम्मत को यही पैग़ाम दिया है? जो ये तक़रीर करने वाले और नात पढ़ने वाले दे रहे हैं। क्या इस तरह की सोच दिलाना खुद आप स0अ0 की हदीसों के साथ मज़ाक़ नहीं है?याद रखने की बात है कि सिफ़ारिश की हदीसें गुनाहों की या ग़फ़लत की ज़िन्दगी गुज़ारने के लिये बिल्कुल नहीं हैं, ये तो अल्लाह के बन्दों को मायूसी के दलदल से निकालने के लिये हैं ताकि अल्लाह के बन्दे अल्लाह की रहमत से और ज़्यादा क़रीब हो जायें और रसूलुल्लाह स0अ0 के संबंध में और अधिक बढ़ोत्तरी हो, जिसके नतीजे में एक साफ़–सुथरी ज़िन्दगी वजूद में आये। क़यामत के दिन हम गुनाहों में लिपटे हुए न आयें, आप स0अ0 ने अपनी उम्मत को हमेशा जागरूक रखा। .....(शेष पेज 13 पर)

आत्महत्या
कारण व समाधान

अहसन अब्दुल हक़ नदवी

अल्लाह तआला ने मनुष्य को दूसरे प्राणियों की तुलना में जो श्रेष्ठता दी है उसमें से एक महत्वपूर्ण चीज़ जान की सुरक्षा भी है। और इसीलिये शरीअत के विशेषज्ञों ने लिखा है कि शरीअत पांच आदेशों पर आधारित है:

1– जान की सुरक्षा 2– दीन की सुरक्षा 3– अक़्ल की सुरक्षा 4– इज़्ज़त की सुरक्षा 5– माल की सुरक्षा

एक इन्सान की जान इतनी कीमती है कि अकारण किसी इन्सान को मारना पूरी मानवता को मारने के बराबर घोषित कर दिया गया है। अल्लाह के रसूल स0अ0 ने लोगों को औलाद की अधिकता पर ज़ोर दिया और फ़रमाया: कि मैं उम्मत की अधिकता पर गर्व करूंगा। (अबूदाऊद)

अल्लाह के रसूल स0अ0 ने सबसे पहले खुद पर ख़र्च करने का आदेश दिया और ख़ुद पर ख़र्च करने को भी सदक़ा बताया।

"एक दीनार वो है जो तुमने खुदा की राह में ख़र्च किया, एक वो है जो तुमने किसी ग़ुलाम को आज़ाद करने में ख़र्च किया, एक वो है जो किसी फ़क़ीर को सदक़े में दिया और एक वो है जो तुमने अपने घरवालों पर खर्च किया, उनमें सबसे ज़्यादा अज्र व सवाब उस दीनार पर है जो तुमने अपने घरवालों पर ख़र्च किया।" (मुस्लिम)

दुनिया की सारी चीज़ें अल्लाह की दी हुई नेमत है। उनमें सबसे बड़ी नेमत ज़िन्दगी है। ज़िन्दगी की बदौलत ही इन्सान दूसरी नेमतों से फ़ायदा उठाने के लायक़ रहता है। इन्सान को इस नेमत को भलाई के कामों में लगाकर दुनिया व आख़िरत में बुलन्द मक़ाम हासिल कर सकता है। इसीलिये इलाज करने पर ज़ोर दिया गया है ताकि इन्सानी जान के बचाव का सामान हो और इन्सान मरने से बचा रहे।

अल्लाह तआला ने इन्सान को अच्छे सांचे में ढ़ाला है। उसमें अक़्ल की और रूह की विशेषतांए रखने के साथ उसकी बाहरी शक्ल व सूरत भी अच्छी बनायी है और दूसरे प्राणियों की तुलना में उसे ख़ूबसूरत बनाया है। अल्लाह तआला कुरआन मजीद में फ़रमाता है:

"हमने इन्सान को अच्छे सांचे पर पैदा किया" (सूरह तीन: 3)

जान अल्लाह तआला की अता की हुई अमानत है। इन्सान अपनी जान का मालिक नहीं। जिस तरह दूसरे की जान लेने का किसी को हक़ नहीं, इसी तरह अपनी जान लेने का भी किसी को हक़ नहीं। मुस्लिम की शरह में लिखा है: "अपनी जान गवाने में इतना गुनाह है, जितना दूसरों की जान लेने में है, कोई अपनी जान का मालिक नहीं है, बल्कि ये अल्लाह की है, उसे हानि पहुंचाने का किसी को हक़ नहीं।" (फ़तेहुल मलहम: 1/265)

इन्सान अपनी जान से ख़ुद ही फ़ायदा नहीं उठाता। उसकी ज़ात से दूसरों का हक़ और दूसरों का फ़ायदा भी जुड़ा हुआ है। आदमी किसी का बेटा, किसी का बाप, किसी का पति, किसी का भाई और किसी का चचा होता है, एक इन्सान की ज़ात से अपने–पराये सब फ़ायदा उठाते हैं और फ़ायदे की उम्मीद लगाते हैं।

आत्महत्या में न केवल एक व्यक्ति का नुक़सान होता है, बल्कि एक परिवार, एक ख़ानदान और एक समाज का नुक़सान होता है, इतने लोगों को परेशानी में डालना, उनके अधिकारों का हनन करना और उनकी उम्मीदों पर पानी फेर देना माफ़ कर देने के क़ाबिल नहीं है। आप स0अ0 ने अपने–पराये सबके अधिकार बताये है और उनके साथ सहयोग करने पर ज़ोर दिया है। आत्महत्या से चूंकि इन सभी अधिकारों का हनन हो जाता है इसलिये शरीअत ने इससे मना किया है।

कुरआन मजीद की इस आयत ने साफ़ तौर पर ख़ुदकुशी से मना किया है:

"तुम अपने आप को क़त्ल न करो, यक़ीन रखो कि

अल्लाह तुम पर मेहरबान है।" "और तुम अपने हाथों से अपने आप को परेशानी में न डालो"

अल्लाह के रसूल स0अ0 ने कई जगह आत्महत्या करने वालों का ख़तरनाक अन्जाम बताकर बुरे कामों से ख़बरदार करने की कोशिश की है, इसीलिये आप स0अ0 ने इरशाद फ़रमायाः

"जो शख़्स अपनेआप को धारदार हथियार से क़त्ल करे, उसे जहन्नम की आग में उसी से अज़ाब दिया जायेगा।" (बुख़ारी)

दूसरी रिवायत में इस तरह हैः

"जो दुनिया में जिस चीज़ से आत्महत्या करेगा, क़यामत के दिन उसी चीज़ से उसको अज़ाब दिया जायेगा।" (सुनन दारमी)

मुस्लिम की एक रिवायत में साफ़ इरशाद हैः

"जो खुद को लोहे से मारेगा, जहन्नम की आग में वो लोहा उसके हाथ में होगा, वो उसको हमेशा अपने पेट में चुभा रहा होगा, जिसने ज़हर पीकर आत्महत्या की, वो हमेशा घोटता रहेगा, जिसने पहाड़ से कूद कर अपनी जान दी, वो हमेशा जहन्नम में गिरता रहेगा।" (मुस्लिम)

इस क्रम में स्वयं आप स0अ0 के ज़माने का एक वाक़्या नक़ल किया गया है कि हज़रत अबूहुरैरा रज़ि0 कहते हैं कि हम रसूलुल्लाह स0अ0 के साथ ख़ैबर में हाज़िर हुए, अल्लाह के रसूल स0अ0 ने एक ऐसे आदमी के बारे में जो इस्लाम का दावा करता था फ़रमायाः "ये जहन्नम वालों में से है" जब लड़ाई का वक़्त आया तो उसने बहुत ही दिलेरी के साथ जंग में हिस्सा लिया, वो बहुत ज़ख़्मी हो गया, ज़ख़्म की वजह से वो हिल भी नहीं सकता था, एक सहाबी ने आकर कहाः ऐ अल्लाह के रसूल स0अ0! आपने कहा था कि वो जहन्नमी है, कुछ लोगों को शक हो रहा था, उसने ज़ख़्म में बहुत ज़्यादा तकलीफ़ महसूस की, झुक कर तरकश से एक तीर निकाला और उससे अपने को ज़िबह कर लिया, कुछ लोग जल्दी से रसूलुल्लाह स0अ0 के पास पहुंचे और बताया कि अल्लाह के रसूल! अल्लाह तआला ने आप की बात सच कर दी। फ़लां शख़्स ने अपने आप को ज़िबह कर लिया और खुदकुशी कर ली। रसूलुल्लाह स0अ0 ने फ़रमायाः खड़े होकर ऐलान कर दो कि जन्नत में मोमिन ही दाख़िल होगा, अल्लाह तआला गुनहगार से भी इस दीन की मदद फ़रमाते हैं।

इस वाक़्ये से अन्दाज़ा लगाया जा सकता है कि आत्महत्या कितना बड़ा गुनाह है कि जिहाद जैसा बड़ा काम भी आत्महत्या करने वाले को सज़ा से नहीं बचा सका।

आप स0अ0 ने आत्महत्या करने वाले की जनाज़े की नमाज़ नहीं पढ़ी है। इसीलिये हज़रत जाबिर बिन समर रज़ि0 फ़रमाते हैंः "एक आदमी ने आत्म हत्या कर ली थी तो आप स0अ0 ने उसकी नमाज़ जनाज़ा नहीं पढ़ी।" (तिरमिज़ी)

नसई की एक रिवायत में इस तरह से हैः

"आदमी ने चौड़े तीर से खुद को क़त्ल कर लिया था, तो रसूलुल्लाह स0अ0 ने फ़रमायाः मैं तो उसकी जनाज़े की नमाज़ नहीं पढ़ूंगा।" (नसाई)

इस हदीस के ज़ाहिर पर उन लोगों ने अमल किया है जो ये कहते हैं कि नाफ़रमानी की वजह से ख़ुदकुशी करने वाले की जनाज़े की नमाज़ नहीं पढ़ी जायेगी। जमहूर उलमा इसका जवाब ये देते हैं कि ऐसे काम से लोगों को रोकने के लिये आप स0अ0 ने उसकी जनाज़े की नमाज़ नहीं पढ़ी, जबकि आप स0अ0 ने सहाबा किराम को जनाज़े की नमाज़ पढ़ने का हुक्म दिया और फ़रमायाः अपने साथी की जनाज़े की नमाज़ पढ़ो।

इसलिये आत्महत्या करने वाले की जनाज़े की नमाज़ पढ़ी जायेगी।

वर्तमान युग में आत्महत्या का रूझान बहुत बढ़ गया है। आजकल शायद ही किसी दिन के अख़बार में आत्महत्या की घटनांए न रहती हों। इसके अलग–अलग कारण हैं। अधिकतर ऐसे लोग आर्थिक तंगी और क़र्ज़ के बोझ से बचने के लिये आत्महत्या कर लेते हैं। छात्र परीक्षा में असफल होने पर आत्महत्या कर लेते हैं। औरतें ससुराल वालों की न समाप्त होने वाली मांगो से तंग आकर आत्महत्या कर लेती हैं। नाकाम आशिक़ आत्महत्या को अपना इलाज समझते हैं। इन सभी कारणों के पीछे नाउम्मीदी, मायूसी, बदगुमानी, बेसब्री और ईमान की कमज़ोरी है।

इसीलिये रसूलुल्लाह स0अ0 ने इन सभी बातों से रोका है। इन्सान को दुनिया के बजाय अल्लाह पर भरोसा

रखना चाहिये। उससे भलाई की उम्मीद रखनी चाहिये। कोई बात अपनी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ हो जाये तो उस पर सब्र करना चाहिये और ये समझना चाहिये कि इसी में हमारे लिये भलाई होगी, अल्लाह तआला ने इनसानों के दुनिया में आने के बाद इस बात से बाख़बर कर दिया कि वो हिम्मत और हौसले का दामन हाथ से नहीं छोड़े, सब्र से काम ले, क्योंकि सब्र का बदला दुनिया में नहीं मिल सका तो आख़िरत में ज़रूर मिलेगा। इसके विपरीत आत्महत्या करना दुनिया व आख़िरत दोनों में बेचैनी व परेशानी की वजह बनेगा।

इसीलिये अल्लाह तआला ने पहले ही इस बात से ख़बरदार कर दिया कि ये दुनिया इम्तिहान की जगह है न कि ईनाम की, इसलिये मुसीबतें और परेशानियां यहीं आयेंगी, इसीलिये मुसीबतों और परेशानियों पर सब्र करने की बात कही है।

"हम ज़रूर तुम्हें कुछ ख़ौफ़ व ख़तरे, फ़ाक़ा व भूख, जान व माल और आमदनी के नुक़सान में डालकर आज़मायेंगे (इन हालात में) सब्र करने वालों को ख़ुशख़बरी सुना दो, जब उनको कोई मुसीबत पहुंचती है तो वो कहते हैं: हम अल्लाह ही के हैं, और उसी की तरफ़ पलट कर जाना है, उन पर अल्लाह की तरफ़ से इनायतें और रहमत होगी, यही वो लोग हैं जो सीधी राह पर हैं।" (सूरह बक़रा: 154–156)

तंगी और परेशानी से घबराने की ज़रूरत नहीं, तंगी के बाद आसानी आती है।

अल्लाह तआला का इरशाद है:

"यक़ीनन तंगी के बाद फ़रावानी भी है, तंगी के बाद दो गुनी फ़रावानी है।" (इन्शराह: 5–6)

ख़ुद कुशी की एक वजह लगातार मायूसी और नाउम्मीदी होती है, अल्लाह तआला ने इससे मना फ़रमाया है:

"ऐ मेरे बन्दो! जिसने अपनी जान पर ज़्यादती की है, अल्लाह की रहमत से मायूस न हो जाओ, यक़ीनन अल्लाह सारे गुनाह माफ़ कर देता है।"

इन सभी दलीलों की रोशनी में काश लोग आत्महत्या की गंभीरता को सोचे, अपनी जान की क़ीमत का अन्दाज़ा लगाएं और अपनी जान से अपने–पराये और अपने देश व क़ौम का फ़ायदा पहुंचाने का हमेशा हौसला रखें।

शेष: सिफ़ारिश का क़ुरानी विचार

आप स0अ0 का इरशाद है: "हरगिज़ ऐसा न हो कि तुममे से कोई क़यामत के दिन अपनी गर्दन पर ऊंट ले आये, जो ख़यानत या चोरी से हथिया लिया गया होगा, जो आवाज़ निकाल रहा होगा, फिर मुझसे आकर कहे कि या रसूलुल्लाह स0अ0! मेरी मदद फ़रमाइये। तो मैं कहूंगा: मैं तेरे लिये किसी चीज़ का हक़ नहीं रखता, मैंने तो तुम्हें साफ़–साफ़ बाते पहुंचा दी थी। हरगिज़ तुममे से कोई घोड़ा उठाये हुए क़यामत के दिन मेरे पास न आये, जो हिनहिना रहा हो, और मुझसे यूं फ़रियाद करे कि या रसूलुल्लाह स0अ0! मेरी मदद कीजिये, मैं कहूंगा: मैं तेरे लिये किसी तरह का हक़ नहीं रखता हूं मैंने बात पहुंचा दी थी फिर भी तू नहीं माना। हरगिज़ ये देखने में न आये कि तुममे से कोई अपनी गर्दन पर किसी इन्सानी जान को लेकर आये जो चीख़ रही हो यानि किसी को क़त्ल किया हो या ग़नीमत के माल में से किसी ग़ुलाम को ज़बरदस्ती ले लिया हो, फिर मुझसे यूं कहे कि या रसूलुल्लाह स0अ0 मदद करिये! मैं कहूंगा: मैं तेरे कुछ काम नहीं आ सकता। मैंने तुझे पूरी बात पहुंचा दी थी फिर तूने ये हरकत क्यों की, मैं हरगिज़ क़यामत के दिन किसी को न देखूं कि अपने सर पर कपड़ों की धज्जियां लेकर आये जो लहरा रही हों, चोरी या ख़यानत के लिये हुए कपड़े और यू कहे कि या रसूलुल्लाह स0अ0! मदद फ़रमाइये, मैं कहूंगा: मैं तेरे लिये कोई हक़ नहीं रखता, मैंने तुझे बात पहुंचा दी थी। मैं हरगिज़ तुममें से किसी की ये हालत न देखूं कि क़यामत के दिन अपनी गर्दन पर सोना चांदी लिये आये, फिर मुझसे कहे कि या रसूलुल्लाह स0अ0! कुछ मदद कीजिये! मैं कहूंगा: मैं तेरे लिये कुछ हक़ नहीं रखता, मैंने तो बात साफ़–साफ़ पहुंचा दी थी" (मिश्कात, मुस्लिम)

ये बात बिल्कुल साफ़ और मत्तफ़क़ अलैह रिवायत थी जिससे मालूम होता है कि आप स0अ0 को ऐसे लोग बिल्कुल पसंद नहीं होंगे, इसलिये उम्मत की ज़िम्मेदारी ये है कि वो अल्लाह और रसूल को नाराज़ करने वाले हर काम से दूर रहें ताकि अल्लाह के दरबार की हाज़िरी बाइज़्ज़त हाज़िरी हो और ख़ुद रसूलुल्लाह स0अ0 भी अपने इस उम्मती को देखकर ख़ुशी महसूस फ़रमाये, बाक़ी उम्मीद यही है कि और हदीसों से भी इसको इशारे मिलते हैं कि उम्मत के साथ अल्लाह का मामला फ़ज़्ल व करम का होगा।

धार्मिक शिक्षा और मुस्लिम औरतें

सैय्यद अनवर शाह बग़दादी

ये वास्तविकता है कि इस्लाम से पहले अरबों के जीवन की बारे में कोई गंभीर और गहरी सोच नहीं थी। उनके जीवन का उद्देश्य माल व दौलत की प्राप्ति थी। इस्लाम ने उनके सामने जीवन का एक ऐसा सिद्धान्त प्रस्तुत किया जिसमें व्यवहारिक सीमांए, स्वयं का निरीक्षण व हलाल व हराम के नियम थे। अज़ाब व सवाब, जन्नत व दोज़ख़ के विचार थे। खुदा और उसके रसूल स0अ0 को मानना और अनकी आज्ञापालन की शिक्षा थी। इस सिद्धान्त को जब लोग धीरे–धीरे समझने लगे तो इस्लाम ने उनको आधार बनाकर एक समाज के निर्माण का आरम्भ किया। इसी बीच खुदा का हुक्म आया कि औरत को भी इसी समाज का हिस्सा बनना चाहिये। उससे उसी तरह व्यवहारिक नियमों व क़ानूनों की पाबिन्दयों की शपथ ली जाये।

"ऐ नबी स0अ0! जब मोमिन औरतें इन बातों पर बैत करने के लिये तुम्हारे पास आयें कि अल्लाह के साथ न तो कोई शरीक ठहरायेंगी और न चोरी करेंगी और न ज़िना करेंगी और न अपनी औलाद को क़त्ल करेंगी, न जानबूझ कर किसी पर आरोप लगायेंगी तो तुम उनसे बैत ले लो और उनके लिये अल्लाह से मग़फ़िरत की दुआ करो। बिला शक अल्लाह बहुत बख़्शने वाला है।" (सूरह मुमतहिना: 12)

इस आयत में दीन के जिन नियमों की पाबन्दी की शपथ औरतों से ली गयी है उनकी पूर्ति के लिये दीन का ज्ञान और उसकी शिक्षा आवश्यक है।

रसूलुल्लाह स0अ0 के दौर का ज़िक्र है कि औरतों को अपने लिये आये हुए हुक्मों को मालूम करने का बड़ा शौक़ था। हज़रत आयशा रज़ि0 फ़रमाती हैं कि अन्सार की औरतें भी बहुत ख़ूब थीं। दीन की समझ बूझ हासिल करने के लिये शर्म व हया उनके लिये रुकावट नहीं बनती थी। उस दौर की औरतें इस्लामी शिक्षा का अध्ययन इतनी गहराई और बारीकी से करती थीं जिसका अनुमान हज़रत आयशा रज़ि0 के इन शब्दों से लगाया जा सकता है। हुज़ूर स0अ0 के युग में एक आयत नाज़िल होती तो हम उसमें बताये हुए हलाल व हराम और भलाई व बुराई को याद कर लेते थे। रिवायतों से मालूम होता है कि इल्म व इबादत की मजलिसों (सभा) में औरतें बड़े शौक़ से और अत्यधिक संख्या में शामिल होती थीं। ख़ौला बिन्त क़ैस रज़ि0 हुज़ूर स0अ0 की बुलन्द आवाज़ का चर्चा करते हुए कहती हैं कि मैं जुमा के दिन रसूलुल्लाह स0अ0 का ख़ुत्बा अच्छी तरह सुनती थी, हालांकि मैं सबसे आख़िर में होती थी। ऐसे अवसरों पर औरतें बड़ी संख्यां में शामिल होती थीं और रसूलुल्लाह स0अ0 की शिक्षाओं को ध्यान से सुनती थीं। हारिसा इब्ने नोमान की एक बेटी फ़रमाती हैं कि मैंने रसूलुल्लाह स0अ0 की मुबारक ज़बान से सुनकर पूरी सूरह कहफ़ याद की है। जिसे आप स0अ0 हर जुमा को लोगों की नसीहत के लिये ख़ुत्बे में पढ़ते थे।

नबी करीम स0अ0 ने औरतों को शैक्षिक व वैचारिक रूप से आगे बढ़ाने की ओर ध्यान दिलाया और इस पर अमल करने वालों के लिये सवाब की बशारत दी है। बाप के रिश्ते से आप स0अ0 ने फ़रमाया, जिसने लड़कियों की परवरिश की, उनको अदब व सलीक़ा सिखाया, उनकी शादी की और उनके साथ अच्छा सुलूक किया उसके लिये जन्नत है। (मुस्लिम शरीफ़)

मर्दों को कुरआन मजीद के ख़ास–ख़ास हिस्सों की तरफ़ भी ध्यान दिलाया गया है वो अपनी बीवियों को उनकी तालीम दें। जैसे सूरह बक़रा के बारे में फ़रमाया कि बेशक अल्लाह तआला ने सूरह बक़रह को दो आयतों पर ख़त्म किया है जो मुझको इस ख़ास ख़ज़ाने से दी गयी है जो अर्श के नीचे है। इसलिये तुम ख़ुद भी इसको सीखो और अपनी बीवियों को भी सिखाओ। (अबूदाऊद) ख़ुद आप स0अ0 इस बात की कोशिश करते कि आप स0अ0 से संबंधित लोगों में रहने वाली औरतें दीन की बुनियादी शिक्षाओं से अनभिज्ञ न रहें।

इतिहास से पता चलता है कि सहाबा व ताबईन के ज़माने में औरतों में पढ़ने की तरह लिखना भी आम हो चुका था और वो लेखनी से इस हद तक परिचित हो चुकी थीं कि उनके अलग–अलग मसले व जानकारियां लिखने में कोई ज़हमत पेश नहीं आती थी। इसका अन्दाज़ा इस बात से किया जा सकता है कि "बरी बिन्त मऊज़ कहती हैं कि हम कुछ औरतों ने असमा बिन्त मक़रूमा से इत्र ख़रीदा। जब उन्होंने इत्र हमारी शीशी में भर दिया तो

कहा तुम्हारे ज़िम्मे जो रक़म है वो लिखवाओ।" आप स0अ0 ने केवल ये पर्याप्त नहीं समझा कि औरतें दीन के कुछ उसूल और आधारभूत नियमों से परिचित रहें बल्कि अपनी किताबी शिक्षा को भी ज़रूरी क़रार दिया ताकि इस ज्ञान का साधन केवल ज़बान ही नहीं बल्कि क़लम भी हो जिसकी ताईद कुरआन की इस आयत से भी होती है: "जिसने क़लम से सिखाया" (सूरह अलक़) शिफ़ा बिन्त अब्दुल्लाह कहती हैं कि एक दिन मैं हज़रत हफ़्सा रज़ि0 के पास बैठी हुई थीं। आप स0अ0 ने फ़रमाया कि जिस तरह तुमने उनको किताब सिखाई है। उसी तरह उनको नमला बीमारी की दुआ न सिखाओगी?(अबूदाऊद)

हज़रत आयशा रज़ि0 के ख़ास शागिर्द उरवह इब्ने ज़ुबैर रज़ि0 उनके ज्ञान की गहराई को इन शब्दों में प्रकट करते हैं: "मैंने हज़रत आयशा रज़ि0 से ज़्यादा हुक्मों व फ़र्ज़ों, हलाल व हराम, शेर व अदब, अरब वालों के इतिहास और उनका गोत्र जानने वाला किसी को नहीं पाया। आपके हिसाब का ये हाल था कि बड़े–बड़े सहाबा किराम उनसे विरासत के मसले पूछते थे।"

इमाम मालिक रह0 की बेटी के इल्म का ये हाल था कि छात्र अगर "मुअत्ता" पढ़ते हुए कहीं ग़लती करता तो अपने कमरे के अन्दर से दरवाज़ा खटखटाती। इमाम मौसूफ़ को उनके इल्म पर इतना एतबार वो पढ़ने वाले से कहते कि दोहराओ तुम ग़लती कर रहे हो।

इन रिवायतों से ये बात निखर कर सामने आ जाती है कि औरतों को धार्मिक शिक्षा देना कितना महत्वपूर्ण है और क्यों न हो जबकि मां ही बच्चे की सबसे पहली शिक्षिका और उसकी गोद उसका सबसे पहला मदरसा है। इसीलिये मां को धार्मिक शिक्षा व प्रशिक्षण, श्रेष्ठ व्यवहार और इस्लामी सभ्यता व संस्कृति से जुड़ा होना पड़ेगा। आज मुस्लिम औरतें धार्मिक शिक्षा से इस हद तक बेगाना हो चुकी हैं कि उन्हें अपने पैग़म्बरों का इतिहास मालूम नहीं, उनका कलिमा ठीक नहीं। इस्लामी फ़र्ज़ों से वो अक्सर बेख़बर हैं। रस्मोरिवाज में बहुत आगे हैं। ज़ाहिर है कि ऐसे हालात में उनकी गोद में पलने वाले बच्चे की सही तरबियत कैसे हो सकती है। बेकार कच्चे माल से अच्छा संग्रह कभी तैयार नहीं हो सकता। आज जब औरतों की शिक्षा की बात कही जाती है तो बहुत से लोग चिढ़ते और नाराज़ होते हैं और इस मसले को टाल देना चाहते हैं या कभी दुनिया की शिक्षाप्राप्त औरतों का उदाहरण देते हैं। जबकि मुस्लिम औरतों को दुनिया की शिक्षा से अधिक धार्मिक शिक्षा की आवश्यकता है।

मुसलमान और सरकारी नौकरियां

"केन्द्रीय मंत्रालयों और सरकारी विभागों से जो आंकड़े प्राप्त हुए हैं उनकी पड़ताल से पता चलता है कि केन्द्रीय सरकारी नौकरियों में मुसलमानों की उन्नति का प्रतिशत लगातार घट रहा है। इन आंकड़ों के अनुसार नियुक्ती का ये प्रतिशत 2010–11 में 11.56 प्रतिशत था लेकिन केवल एक साल के अन्दर 2012–13 में ये प्रतिशत घटकर 6.89 प्रतिशत हो गया है। यानि उन्नति के अनुपात में 50 प्रतिशत की कमी आ गयी है। ये वास्तव में एक भयावह स्थिति है विशेष रूप से उन दावों को ध्यान में रखते हुए जिसमें केन्द्र सरकार की ओर से बार–बार ये ऐलान किया जाता रहा है कि उसने सभी केन्द्रीय मंत्रालयों और प्राइवेट सेक्टरों में ये आदेश दे रखा है कि वो अपने यहां की नौकरियों में मुसलमानों की नियुक्ती के लिये विशेष मुहिम आरम्भ करें और जहां तक संभव हो सके नियुक्ती में उनको वरीयता दें। इसमें कोई दो राय नहीं कि इस राय पर किसी न किसी हद तक अमल हुआ है। यही कारण है कि 2010–11 में मुसलमानों की नियुक्ती के प्रतिशत में ख़ासी बढ़ोत्तरी हुई। और जैसा कि आंकड़े बताते हैं मुसलमानों की सबसे अधिक नियुक्तियां रेलवे में हुई हैं। लेकिन फिर अचानक एक साल के अन्दर स्थिति बदल गयी। जबकि स्वयं प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह कई बार मुसलमानों की नियुक्ति के सिलसिले में बहुत से मंत्रालयों के नाम हिदायतनामे जारी कर चुके हैं लेकिन इन सभी हिदायतों के बावजूद जो नयी रिपोर्ट सामने आयी है वो कोई और कहानी बता रही है। मुसलमानों की नियुक्ति के अनुपात में ऐसी गिरावट की कोई ज़िम्मेदारी संबंधित मंत्रालयों और विभागों के लोग लेने को तैयार नहीं नज़र आते। बल्कि उन सब ने बहुत ही ख़ूबसूरती के साथ इस गिरावट की ज़िम्मेदारी स्वयं मुस्लिम उम्मीदवारों पर, उनकी नाक़िस शिक्षा, उनकी सरकारी नौकरियों से कम दिलचस्पी पर, रिज़र्वेशन के अभाव पर, उनकी अयोग्यता पर, उनकी प्रचलित धार्मिक शिक्षा पर और लिखित परीक्षा में उनकी अकुशलता पर डाल दी है। उन मंत्रालयों ने अपने संज्ञान के सारे कारण गिना डाले जो सरकारी नौकरियों में मुस्लिम उम्मीदवारों की असफलता का कारण बन सकते हैं। और कोई कसर नहीं छोड़ी है कि असफलता का आरोप उनकी कार्यप्रणाली और उनके पक्षपाती व्यवहार पर लग जाये। मानो की वो अपना पहलू साफ़ बचा ले गये। ये कोई सुनी सुनाई कहानी नहीं है और न ये कोई आरोप है बल्कि ये केन्द्रीय मंत्री नारायन स्वामी ने राज्यसभा को एक लिखित सवाल के जवाब में ये सूचनांए प्रस्तुत कीं।"

यहूदियों की फ़ितरत

मुहम्मद यूसुफ़ रामपुरी

यहूदियों की फ़ितरत रही है कि वो जहां भी रहे साज़िशें रचते रहे और जिस देश में भी गये वहां विभाजन करते रहे। यहूदियों की इस फ़ितरत और हज़ारों साल पर आधारित उनकी इस रिवायत की बुनियाद पर उनसे ये उम्मीद नहीं की जा सकती कि वो कभी ख़ामोशी के साथ रहेंगे और विनाश नहीं फैलायेंगे। इतिहास गवाह है, कि उन्होंने अपने सबसे बड़े नजात दिलाने वाले हज़रत मूसा अलै0 के साथ भी साज़िश और सरकशी की। जबकि हज़रत मूसा अलै0 ने उनको फ़िरऔन के ज़ुल्म से नजात दिलायी और अल्लाह तआला से दुआ करके तरह–तरह की सुविधांए उनके लिये उपलब्ध करायीं।

इतिहास गवाह है कि अपनी शरारतों और ख़तरनाक साज़िशों की वजह से उन्हें दर–दर की ठोकरें खानी पड़ीं और अलग–अलग देशों में उन्हें पनाह लेनी पड़ी मगर वो फिर भी अपनी हरकतों से बाज़ नहीं आये। जैसे 627ई0 में उनकी शरारतों की वजह से उन्हें हिजाज़ से निकाला गया। फिर उनकी एक बड़ी संख्यां ने शाम (वर्तमान सीरिया) में पनाह ली लेकिन वहां भी ये ख़ामोशी से न बैठे और अराजकता फैलाते रहे, परिणाम स्वरूप 890ई0 में वहां से उन्हें निकाल दिया गया। जिसके बाद उन्होंने पुर्तगाल में आबाद होना शुरू कर दिया, वहां भी उन्हें ज़्यादा दिन नहीं गुज़रे थे कि उनकी चालबाज़ियों को देखते हुए वहां से उन्हें निकलने पर मजबूर कर दिया गया। अतः 920ई0 में यहूदी वहां से फ़रार हो गये और स्पेन चले गये। स्पेन में उन्हें सुकून से रहने का मौक़ा मिला लेकिन जल्द ही उन्होंने इस मौक़े को भी गंवा दिया क्योंकि यहां भी ये विनाशकारी नीतियों में लग गये। स्पेन ने 110 ई0 में यहूदियों को अपने देश से बाहर कर दिया फिर ये अलग–अलग जगहों पर गये ताकि कहीं उनको पनाह मिल सके। वो इंग्लैन्ड भी गये, लेकिन 1290ई0 में वहां से भगा दिये गये और फिर वो फ़्रांस जा पहुंचे। फ़्रांस में जाकर भी उन्होंने अपनी पुरानी आदतों को दोहराया, जिसके कारण 1306 ई0 में उन्हें फ़्रांस से बाहर होना पड़ा। इसके बाद वो दर–दर की ठोकरें खाने लगे और किसी भी देश में ठिकाना तलाश करने लगे लेकिन किसी ने भी उनको पनाह न दी। यहां तक कि उन्होंने दोबारा फ़्रांस ही का रूख़ किया, लेकिन दोबारा फ़्रांस ने भी उन्हें न स्वीकार किया और 1334 एक बार फिर उन्हें देश से बाहर निकाल दिया। इसके बाद वो ठिकाने की तलाश में हालैण्ड गये, उसको अपना देश बनाने की कोशिश की, किन्तु अपनी नकारात्मक कार्यवाहियां जारी रखीं जिसके कारण हालैण्ड के शासन और वहां की जनता उनसे बहुत ख़फ़ा हो गयी और वहां से निकलने पर वो मजबूर हो गये। यहां से यहूदियों ने रूस का सफ़र किया। आरम्भ में तो उन्होंने स्वंय को रूस में जमाने की कोशिश की पर साथ ही साथ मक्कारियों को भी जारी रखा, आख़िरकार तंग आकर रूस ने 1510ई0 में उन्हें इटली की ओर खदेड़ दिया फिर जल्द ही 1540 में उन्होंने जर्मनी में पनाह ली। जर्मनी भी जल्द ही उनकी चालों को समझ गया और केवल ग्यारह साल की मुद्दत में उसने उन्हें धक्का दे दिया। अतः 1551 ई0 में वो वहां से निकल आये। वो किसी तरह 1551ई0 में वहां से निकल आये और तुर्की में ज़मी की हैसियत से बस गये। (तारीख़ बैतुल मुक़द्दस)

हर दौर और हर देश में उनकी साज़िशों पर आधारित हरकतों को देखकर कहा जा सकता है कि वो मध्य एशिया में शांति की स्थापना नही होने देंगे। भले ही अमरीका या इंग्लैण्ड या यूरोपीय बिरादरी उनसे अमन व सलामती की भीख मांगे। मध्य एशिया में शांति उसी समय संभव है जबकि यहूदियों के ख़िलाफ़ सख़्त क़दम उठायें जायें। और दुनिया की क़ौमें एक होकर या बड़े देश एक होकर उसके ख़िलाफ़ बड़ी कार्यवाही करें। सहयूनियों को नर्मी से समझाना मुश्किल ही नहीं नामुमकिन है। ये ध्यान रहना चाहिये कि इस्राईल को जितनी ढ़ील दी जायेगी वो उतना ही ख़तरनाक होता जायेगा और एक दिन दुनिया के लिये ख़तरा बन जायेगा। दुनिया के क़ौमें आगे आने वाले ख़तरे को महसूस करें और समय रहते ठोस क़दम उठांये और दुनिया में शांति की स्थापना के लिये अहम रोल अदा करें।

अनथक प्रयास

तारिक़ अनवर

15 अगस्त सन् 1947 की सुबह जब सूरज निकला तो वो अपने दामन में जहां आज़ादी की सुबह की बेशुमार खुशियों को समेटे हुए था और पूरा भारत फ़िरंगियों की लम्बे अर्से की ग़ुलामी से नजात के बाद आज़ादी की हवा से अपने दिल व दिमाग़ को रोशन कर रहा था और फ़ुरहत व शादमानी से अपने दिलों को शरसार कर रहा था। आज़ाद भारत को शांत व धर्मनिरपेक्ष बनाने का ख़ाका देश के शासकों के दिल व दिमाग़ में चल रहा था। वहीं भारत के मुसलमानों के लिये ये घड़ी खुशियों से ज़्यादा एक कशमकश की थी। मुहम्मद अली जिन्नाह के नेतृत्व में 16 अगस्त 1947 को वजूद में आये पाकिस्तान की ओर मुसलमानों का एक बड़ा वर्ग कूच करने का इरादा कर चुका था और उनमें से ज़्यादातर लोगों ने कूच किया भी लेकिन इसके बावजूद देश के मुसलमानों की ज़्यादा आबादी इस बात की हामी थी कि उसे भारत में ही रहना चाहिये। लेकिन ये लोग भी शक व शुब्हे में थे। वो ये फ़ैसला नहीं कर पा रहे थे कि कल तक "जिनके दादा–परदादा ने जमुना के किनारे वज़ू किया था, जिनके ख़ून से दिल्ली सींची हुई है और जो कभी खुद ज़लज़ला थे, आज वो ज़लज़लों से क्यों डरने लगे। जिना वजूद उजाला था, वो आज अंधेरों से क्यों कांपने लगे।" वो इसी कशमकश में पड़े थे कि इसी बीच मौलाना अबुल कलाम आज़ाद अक्टूबर 1947 को जामा मस्जिद के अन्दर तश्रीफ़ लाये और क़ौम की ग़ैरत को ललकारते हुए कहा कि:

"जामा मस्जिद के बुलन्द मीनार तुमसे सवाल करते हैं कि तुमने अपने इतिहास के पन्नों को कहां गुम कर दिया?अभी कल की बात है कि जमुना के किनारे तुम्हारे क़ाफ़िले ने वज़ू किया था और आज तुम हो कि तुम्हें यहां रहने में ख़ौफ़ महसूस होता है, हालांकि दिल्ली तुम्हारे ख़ून से सींची हुई है। अभी इन्हीं आंखों के सामने परेशानी का मौसम गुज़रने वाला है। यूं बदल जाओ जैसे तुम पहले कभी इस हालत में ही न थे।"

मौलाना आज़ाद के इस एतिहासिक ख़ुत्बे ने न केवल क़ौमों के दिल व दिमाग़ को झिंझोड़ कर रख दिया बल्कि क़ौम ने अपनी बुद्धिमता का सबूत देते हुए बुलन्द हौसले और हिम्मत से काम लिया और आज भारत को इस बात पर गर्व हो रहा है कि इन्डोनेशिया के बाद सबसे बड़ी मुस्लिम आबादी वाला देश भारत बन गया है।

आज एक बार फिर भारत के मुसलमानों के हौसले पस्त हो रहे हैं। हालांकि हालात मुश्किल ज़रूर हैं। पहले ज़रिये कुछ और थे आज ज़रिये कुछ और हैं। इसमें कोई शक नहीं कि इसके पीछे बहुत से कारण हैं और बिल्कुल हैं। कभी आतंकवाद के नाम पर उनके बच्चों को इन्काउन्टर करके पूरी क़ौम को बदनाम किया गया और ऐसे वाक़्यों की ज्यूडीशियल इन्कवायरी नहीं करवायी गयी, तो कभी आतंकवाद के नाम पर मुस्लिम नौजवानों का शोषण किया गया और साम्प्रदायिक शक्तियों ने ये नारा दिया कि "सभी मुसलमान आतंकवादी नहीं होते लेकिन सभी आतंकवादी मुसलमान होते हैं" तो कभी दूसरे बहानों से उनके साथ पक्षपात किया गया जिसके सैंकड़ों सबूत हैं और वो कभी–कभी सामने भी आते रहते हैं। इन सभी सच्चाइयों के बावजूद मुझे ये कहने में कोई हिचकिचाहट नहीं कि

बक़ा कि फ़िक्र करो ख़ुद ही ज़िन्दगी के लिये
ज़माना कुछ नहीं करता कभी किसी के लिये

वो क़ौम जो नेतृत्व के लिये पैदा की गयी थी उसे आज एक ईमानदार नेतृत्व करने वाले की तलाश है। वो क़ौम जो मार्गदर्शक थी, आज उसे रास्ते की तलाश है। इसके क्या कारण है?वास्तव में उम्मत को एक होकर एक प्लेटफ़ार्म पर आकर इसका हल तलाश करने की आवश्यकता है, लेकिन भारतीय दृष्टिकोण में अल्लामा इक़बाल का ये शेर कहना चाहूंगा कि:

क़ूव्वते फ़िक्र व अमल पहले फ़ना होती है
तब किसी क़ौम की शौकत पे ज़वाल आता है।

आज भारतीय मुसलमानों को स्वतन्त्रता के 65 सालो के भीतर इस हद तक पहुंचा दिया गया कि जब वो वोट करने के लिये जाता है तो वो ये नहीं सोचता कि किसको जितांए और कौन देश व क़ौम के लिये वफ़ादार उम्मीदवार होगा, बल्कि ये सोचता है कि किसको वोट दें ताकि फ़लां हार जाये। भारतीय मुसलमानों को इस सोच से ऊपर उठकर दूसरी दबी–कुचली क़ौमों से सबक़ लेते हुए अपने ख़्यालों और अपनी सोच को बदलने की आवश्यकता है। वोटिंग इसलिये नहीं करना है कि फ़लां हार जाये, बल्कि वोटिंग फ़लां को जिताने के लिये करना है। मेरी समझ से वैसे भी अनुभव करने के लिये पैसंठ साल बहुत होते हैं।

भारतीय मुसलमानों को आरोप प्रत्यारोप की राजनीति और ये कि देश प्रेम का बार–बार प्रमाण देने की राजनीति से ऊपर उठना होगा। क्योंकि साम्प्रदायिक ताक़तों की यही इच्छा है कि मुसलमानों को आपसी व मसलकी झगड़ों में लगा दें ताकि वो आपस के झगड़ों से ही कभी ऊपर न उठ सकें कि शिक्षा के लिये सोचें। आज मुसलमानों पर ये आरोप आता है तो पूरी क़ौम उसका बचाव करने मे बर्सों बर्बाद कर देती है। क़ौम को अपनी वफ़ादारी साबित करने की आवश्यकता नहीं है। वतन को जब भी लहू की ज़रूरत पड़ी है तो हमने ही दिया और इतिहास के पन्ने इस बात की दलील हैं। क़ौम को एक होकर ये सोचना होगा कि आख़िर वो कौन से कारण हैं जिनको अपना कर ऐसे हमलों का जवाब ख़न्दा पेशानी से दिया जा सके। पूरी क़ौम को ऐसे मामलो में शामिल होने के बजाय उसके लिये दूसरे धर्मनिरपेक्ष मार्गों को अपनाने की आवश्यकता है। किसी शायर का शेर है:

चले चलिये कि चलना ही दलीले कामरानी है।
जो थक कर बैठ जाते हैं वो मंज़िल पा नहीं सकते।।

इस समय मुसलमानों को आपसी समस्याओं में उलझने के बजाय दूसरी चीज़ों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। क्योंकि अल्लाह का फ़रमान है कि: "हम दिनों को लोगों के बीच फेरते रहते हैं" और "हर परेशानी के बाद आसानी है" मुसलमानों के लिये ज़रूरी है कि वो इस्लाम और पैग़म्बरे इस्लाम की तालीम का मुकम्मल नमूना बनते हुए केवल तालीमी और इक्तसादी क्षमता प्राप्त करने के लिये पूरी क्षमता ख़र्च करें। और वैसे भी तालीम से मुराद वही तालीम है जिसका दुनिया और आख़िरत दोनो जगह फ़ायदा मिले। इसका मतलब ये हरगिज़ नहीं कि पूरी क़ौम दीनी तालीम में लग जाये। पूरी क़ौम को इस्लाम की बुनियादी चीज़ों की जानकारी के बाद एक जमाअत ऐसी हो जो दीन के प्रचार के लिये स्वयं को समर्पित कर दे। बाक़ी लोग दीन के साथ–साथ वर्तमान साइंस व टेक्नालॉजी व दूसरी कलाओं की जानकारी प्राप्त करें और शिक्षा प्राप्त करने के बाद व्यवहारिकता में निखार और अर्थव्यवस्था अपने आप सदृढ़ हो जायेगी।

इस समय मुसलमानों के मार्गदर्शकों और मुस्लिम संस्थाओं आवश्यक है कि वो शासन की ओर से अल्पसंख्यकों की भलाई के लिये निश्चित की धनराशि और बनायी गयी योजनाओं को ज़्यादा से ज़्यादा लोगों तक पहुंचाये ताकि अधिक से अधिक लोगों को इससे लाभ हो। अल्पसंख्यक कार्यों का मंत्रालय अल्पसंख्यकों के लिये शिक्षा, इम्पावरमेंट, एरिया डेवलपमेंट, अर्थव्यवस्था, वोमेन इम्पावरमेंट और अल्पसंख्यकों की संस्थाओं को सदृढ़ करने के लिये काफ़ी स्कीमें चला रही हैं। इसकी सबसे छोटी सी मिसाल ये है कि बारहवीं पंच वर्षीय योजना के 2012–13 में 1360 करोड़ रूपये, 72 लाख अल्पसंख्यक छात्र जो स्कालरशिप स्कीम के तहत हैं उनको मदद देने के लिये रिलीज़ किये गये हैं। आवश्यकता है कि उनसे फ़ायदा उठाया जाये। अगर इसमें कोई दिक़्क़त या परेशानी आ रही है तो उसमें आसानी लाने के लिये न केवल शासन को उपाय और मेमोरेन्डम दिया जाये बल्कि इसको लागू करने के लिये सरकार पर गणतान्त्रिक मूल्यों को ध्यान में रखते हुए दबाव भी बनाया जाये।

सज्जनों! जब आप शिक्षा के ज़ेवर से लैस नहीं होंगे और अपने बच्चों को यू पी एस सी इम्तहानों के लिये तैयार नहीं करेंगे और दूसरी नयी टेक्नालॉजी के साथ–साथ दीनी तालीम से लैस नहीं करेंगे, तब तक यक़ीन जाने आपकी कोई सुनने वाला नहीं है। आपको इसी तरह वादों के सहारे बहलाया जाता रहेगा और ख़ुद आप बहलते रहेंगे। बस ज़रूरी है कि आप अपने वोट और लोकतन्त्र की ताक़त को पहचानें। यक़ीन जानिये कि हर परेशानी के बाद आसानी है॥

आसमां पर छा गया है आज अगर बादल।
यही बादल तो चन्दा के निकलने की निशानी है।।

अल्लाह की मदद की बुनियादी शर्तें

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

इस्लामी और सांस्कृतिक इतिहास में मुसलमानों के वर्चस्व और उनकी उन्नति कुछ नियमों के साथ जुड़ी रही है। उनमें से बुनियादी शर्त ये है कि हालात कैसे भी हों मुसलमानों ने हमेशा हक़ के झन्डे को बुलन्द किया और उनका नेतृत्व किसी भी हाल में ग़ैर इस्लामी समझौते के लिये तैयार न हुआ। दुनिया चाहे कुछ कहे, हालात चाहे कितने भी ख़राब हों उसने हमेशा हक़ के झन्डे को उठाया है।

अब्बासिया ख़िलाफ़त के पतन और उसके बाद से हालात कुछ उसी तरह के थे। आम तौर से मुसलमान गुलामी की ज़िन्दगी जी रहे थे। इस गुलामी का शिकंजा इतना सख़्त था कि उससे नजात का कोई भी उपाय कारगर नज़र नहीं आ रहा था। गुलामी के गहरे असर ने मुसलमानों को अपने इतिहास और अपने दीन के हवाले से भी शर्मिन्दगी और तरह तरह की माज़रतों में डाल रखा था। इस्लाम की व्यापकता और सम्पूर्णता के विचार दिमागों से मिट गये थे और मुस्लिम दुनिया में हर ओर पश्चिमी सोच और पश्चिमी सभ्यता से संबंध ही में सफलता दिख रही थी। बदक़िस्मती से मुसलमानों का नेतृत्व जिन हाथों में था वो भी पश्चिमी सांचे में ढ़ले हुए और वहीं के परवरदा थे। जिसका स्पष्ट उदाहरण "जमाल अब्दुल नासिर" और "कमाल अता तर्क" हैं। ऐसे हालात में पश्चिम से आंखे मिलाना और उसकी संस्कृति के झोल को सामने लाना पहाड़ काटकर नदी बहा लाने से कम नहीं था। लेकिन हसनुल बन्ना रह0, अल्लामा इक़बाल रह0, मौलाना मौदूदी रह0, और फिर दारूलउलूम देवबन्द और नदवतुल उलमा से जुड़े लोगों ने ये कारनामा अन्जाम दिया कि उन्होंने गुलामी के ज़माने में इस्लाम पर गर्व करना सिखाया। जज़्बे और दलील दोनों सतह पर बताया कि इस्लाम ही हक़ है और पश्चिमी सोच व सभ्यता व्यवहारिक दिवालियेपन का शिकार और तबाही के द्वार पर खड़ी है। और ये यक़ीन दिलाया कि सिर्फ़ आख़िरत ही नहीं बल्कि दुनिया की कामयाबी भी इस्लाम से जुड़ी है और उससे रिश्ते सुधारने में है।

इसीलिये मुसलमानों में ये ख़्याल पैदा हुआ कि इस्लाम झुकने के लिये नहीं आया है बल्कि शासन करने के लिये आया है। यक कारनामा नदी की धारा नहीं बल्कि इतिहास के धारे के विपरीत दिशा में तैरने का काम था।

उम्मत के उरूज की दूसरी शर्त ये है कि सच्चाई का अधिपत्य और इस्लाम को ज़िन्दा करने के लिये सिर्फ़ ज़बानी कोशिश न की जाये बल्कि जद्दोजहद के इस मैदान में अगर कुर्बानियां देना पड़े तो उससे भी न घबराया जाये। इस क्रम में मुस्लिम दुनिया के इस्लामी आन्दोलनों ने कुर्बानी की बहुत सी मिसालें पेश कीं क्योंकि अरब के इतिहास मं संतुलन कम मिलता है जिसके कारण अरब दुनिया के "धर्मनिरपेक्ष शासकों" ने दरिन्दगी की इन्तिहा कर दी। उन्होंने विभिन्न देशों ख़ासकर मिस्र में इस्लामी आन्दोलन पर हिंसा व अत्याचार की हद कर दी। लेकिन इस्लामी आन्दोलनों व शख़्सियतों ने कई दहाइयों तक ज़ुल्म व हिंसा को बर्दाश्त करके एक मिसाल क़ायम कर दी, उन पर ज़ुल्म व सितम के नये–नये अनुभव किये गये लेकिन वो फ़ौलादी खम्बों की तरह अपनी पक्ष पर डटे रहे।

दक्षिणी एशिया में इस्लामी आन्दोलनों को हिंसा के उस रूप का सामना तो नहीं करना पड़ा, जिनसे अरब दुनिया के आन्दोलन गुज़रे लेकिन यहां भी जब्र व क़ैद का एक सिलसिला उन आन्दोलनों के पीछे पड़ा रहा। और कभी–कभी उससे कहीं ज़्यादा सब्र उस प्रोपगन्डे पर करना पड़ा जो शासन के लोगों, साम्प्रदायिक शक्तियों की ओर से सामने आता रहा। लेकिन फिर भी ये आन्दोलन न अपने रास्ते से हटे और न किसी प्रकार की प्रतिक्रिया का शिकार हुए।

सत्य के ध्वज उठाने और उसकी राह में कुर्बानियां बड़ी चीज़ है। मगर अल्लाह वाले इस बात का यक़ीन रखते हैं कि वो जद्दोजहद और कुर्बानियों के हवाले से दृढ़ता का प्रदर्शन भी करेंगे। इस्लाम को फैलाने की कोशिशों के लिये इस्लामी आन्दोलनों और इस्लामी व्यक्तित्वों ने कुर्बानियों के साथ दृढ़ता का भी प्रदर्शन किया है। अतः आज हमारे पास बहुत से लोगों का चालिस पैतालिस साल की कुर्बानियों का वरसा है और बहुत से आन्दोलन तो सत्तर–अस्सी साल की पूंजी लिये हुए हैं।

ये उसूल की बात है कि जब हक़ का झन्डा उठाने, उसकी राह में कुर्बानी और दृढ़ता एक साथ जमा हो जाती है तो अल्लाह तआला वो नेमत अता करता है जिसे "अल्लाह की नुसरत" कहा जाता है। आज मुस्लिम शासन इन्हीं आधारों से वंचित है। बयानबाज़ी, नारे बाज़ी, और प्रदर्शनों से कभी किसी क़ौम का भविष्य नहीं संवरता।

शर्मिन्दगी का एहसास

अबुल अब्बास ख़ाँ

चेहरे पर शर्मिन्दगी, भीगी हुई पलकें, दिल में उठती हुई टीस, अतीत के अंधेरे और भविष्य का डर, उसकी ये हालत इससे पहले कभी न थी, लेकिन जब ज़मीर जागता है तो इन्सान की फ़ितरत उसका साथ देती है। आज इस फ़ितरत ने उसे बेचैन कर दिया। वो मायूसी के समन्दर में ग़ोते खाने लगा। दिल की तड़प और बेचैनी बढ़ती गयी। बेखुदी की आलम में किसी रहबर की तलाश में निकल पड़ा। कभी इस ओर दौड़ता तो कभी उस ओर दौड़ता। इसी हालत में वो बढ़ता रहा कि एक शरीफ़ चेहरा नज़र आया। उसका हाथ थाम लिया और कहने लगा कि मैं दुनिया का सबसे बुरा इन्सान हूं। संगीन जुर्म किये हैं। लेकिन मुझे अपने गुनाहों का एहसास है और मैं गुनाह के इस बोझ से छुटकारा चाहता हूं, बताओ क्या मेरी तौबा की गुंजाइश है? क्या अल्लाह का कोई ऐसा बन्दा है जो मुझे सहारा दे और मेरी कश्ती को किनारे तक ले चले?राहगीर ने कहा कि फ़लां बस्ती में बुजुर्ग हस्ती रहती है, तुम उसके पास जाओ, उम्मीद है कि वहां तुम्हारे दर्द की दवा मिल जाये।

वो दीवानों की तरह उस बुजुर्ग की तरफ़ चल पड़ा। दिली व ज़हनी सुकून पाकर वो बहुत खुश था। बुजुर्ग की ख़िदमत में पहुंचा, और फिर जुर्म की दास्तान, क़त्ल व लूट के वाक़्ये, चोरी, डकैती की तफ़सीलें, मानों ज़िन्दगी के सारे पन्ने खोल दिये और कहने लगा कि क्या इतने गुनाहों के बावजूद भी अल्लाह की रहमत की कुछ उम्मीद की जा सकती है?

बुजुर्ग गुनाहों की इस संगीनी से गुस्सा हो गये, आंखें लाल हो गयीं और सख़्त लहजे में कहने लगे कि तुम्हारी माफ़ी की कोई उम्मीद नहीं। ऐसे संगीन जुर्मों के बाद तू किस मुंह से रहमत की बात करता है?!

बुजुर्ग की बातें सुननी थीं कि उसके पैरों से ज़मीन खिसक गयी। उसकी उम्मीदों का शीश महल चकनाचूर हो गया, निगाहों के सामने फिर अंधेरा ही अंधेरा, सोचने लगा कि जब निन्यानवे क़त्ल करने के बाद भी उसे जहन्नम की आग में जलना है तो फिर सौ पूरे करने में क्या हर्ज है?बस पलक झपकते ही उसकी तलवार उस बुजुर्ग के सिर को धड़ से अलग कर चुकी थी, और खून के धार में उसकी उम्मीदें भी बह गयीं।

ज़मीर की चोट उसके दिल पर लग चुकी थी। इसलिये अन्दर की बेचैनी उसे बेचैन कर देती, उसकी तबियत झुंझला जाती, काश कोई तो बताओ कि मैं गुनाहों के इस बोझ से कैसे आज़ादी पाऊं?कोई तो उम्मीद की किरन दिखा दे। यक़ीनन मैने बहुत गुनाह किये हैं लेकिन क्या मेरा पछतावा काफ़ी नहीं?क्या मेरे शर्मिन्दगी के एहसास की कोई क़ीमत नहीं?वो दीवाना हुआ जा रहा था कि एक शख़्स और नज़र आया, उसका दामन थामकर अपनी बिगड़ी कह सुनायी, उस नेक शख़्स ने कहाः फ़लां बस्ती चले जाओ, वहां नेक लोग बसते हैं, तुम्हें वहीं फ़लां बुजुर्ग मिलेंगे बस उनके हाथ पर अपना हाथ दे देना, यक़ीनन वहां तुम्हारी मुराद पूरी होगी।

वो शख़्स चल पड़ा। उसे यक़ीन था कि उस बस्ती में पहुंचकर उसे दिली सुकून मिलेगा। शर्मिन्दगी के आंसू उसके गुनाहों की सियाही को धो देंगे, वो अपने परवरदिगार को अपनी शक्ल दिखाने के लायक़ बन सकेगा।

लेकिन क़ुदरत का कुछ और ही फ़ैसला था। तक़दीर लिखने वाले ने जितनी सांसे उसके हिस्से में लिखीं थीं वो ख़त्म हो चुकी थीं। सफ़र के दौरान उसकी मौत का वक़्त हो गया और उसकी ज़िन्दगी की लौ फड़फड़ाने लगी।

नेक रूहों को क़ब्ज़ करने वाले फ़रिश्ते और बुरी रूहों को घसीटने वाले फ़रिश्ते दोनो आ पहुंचे। एक ने कहा कि ये एक बुरा शख़्स है, उसके जुर्मों की लिस्ट बहुत लम्बी है, उसके गुनाह इतने हैं कि ये सीधे जहन्नम में जायेगा, इसलिये इसकी रूह मैं ही निकालूंगा। दूसरे ने कहा बेशक ये गुनहगार इन्सान है, इसने पूरे सौ क़त्ल किये हैं लेकिन मरने से पहले इसे अपने गुनाहों पर शर्मिन्दगी थी, ये सच्चे दिल से तौबा करना चाहता था, अपने हर गुनाह को इसने याद किया और गुनाहों पर इसको शर्मिन्दगी का एहसास हुआ। और इसका रब बहुत ही रहम करने वाला है। वो बड़े–बड़े गुनाहों को माफ़ कर देता है। वो तो दिल की कैफ़ियत पर फ़ैसले करता है। उसकी बेपनाह रहमत तो माफ़ी के बहाने ढूंढती है।

इस इख़्तिलाफ़ को देखकर एक तीसरे फ़रिश्ते ने कहा कि रास्ते की दूरी नाप लो, अगर ये नेक बस्ती से क़रीब है तो नेक रूहों को निकालने वाला फ़रिश्ता इसकी रूह को निकाले, वरना बुरी रूहों को निकालने वाला फ़रिश्ता उसकी रूह क़ब्ज़ करे। ज़मीन नापी गयी तो वो नेक बस्ती से सिर्फ़ एक बालिश क़रीब था, और ये भी कहा जाता है कि अल्लाह के हुक्म से उस तरफ़ की दूरी कम कर दी गयी और उस शख़्स के शर्मिन्दगी के एहसास ने उसे जन्नत पहुंचा दिया।

जबान की नेकियां

अल्लाह का नाम

ज़बान की ख़ूबियों में एक ख़ूबी ये है कि वो ज़्यादा से ज़्यादा अल्लाह का मुबारक नाम ले। जो लज़्ज़त व मज़ा अल्लाह का नाम लेने में है वो किसी में नहीं। ख़ासकर अल्लाह शब्द ऐसा प्यारा और रूह को छू लेने वाला है, जिसकी लज़्ज़त को वही जानता है, जिसकी ज़बान पर ये मुबारक लफ़्ज़ चढ़ा हुआ होता है। हर ग़म को दूर करने वाला, हर तकलीफ़ की राहत, हर दर्द की दवा अल्लाह शब्द में छिपी हुई है। मुसलमान की ज़िन्दगी के हर उतार–चढ़ाव में ये शब्द समाया हुआ है। इसके बग़ैर किसी मुसलमान की ज़िन्दगी गुज़र ही नहीं सकती है। इस वक़्त से लेकर ज़िन्दगी के आख़िरी लम्हे तक बल्कि मरने के बाद दफ़नाने तक और दफ़नाने के बाद ईसाले सवाब, उसके मग़फ़िरत के कलिमे अदा करने में उसके बग़ैर चारा नहीं।

जब बच्चा पैदा होता है तो सबसे पहले उसक कानों में अज़ान कही जाती है। उसके कान अल्लाह के लफ़्ज़ से कई बार एक मजलिस में परिचित होते हैं। हर अज़ान में ग्यारह बार अल्लाह का नाम आता है।

इसी तरह इन्तिक़ाल के समय कलिमा तैय्यबा पढ़ने को कहा जाता है। पास बैठने वाला इस कलिमे को पढ़ता है और ख़ुदा मरने वाले को तौफ़ीक़ देता है कि वो दुनिया से जाते जाते इस मुबारक कलिमे को अपनी ज़बान से अदा करे। जिसे अदा करने से शैतान को जो मरने वाले का अच्छा ख़ात्मा देखना नहीं चाहता, नामुरादी मिलती है, और मरने वाला ईमान की हालत में जाता है।

मरने के बाद जनाज़े की नमाज़ में सारे नमाज़ी खड़े होकर जनाज़े की नमाज़ पढ़ते हैं और अल्लाह का नाम बेशुमार बार लिया जाता है। इमाम ज़ोर से अल्लाहुअकबर कहता है। मुर्दा जबकि ज़िन्दगी की सारी चीज़ों से महरूम रहता है, लेकिन इन कलिमों का उस पर जो असर होता है, वो ख़ुदा ही को मालूम है।

क़ब्र में रखते हुए भी लोग अल्लाह का नाम लेते हैं। और उसको ख़ाक के सुपुर्द करते हैं। मिट्टी देने के बाद फ़ातिहा या ईसाले सवाब की शक्ल में बग़ैर अल्लाह के लफ़्ज़ के चारा नहीं, ज़्यादा से ज़्यादा लोग अल्लाह का नाम लेते हैं।

ये तो पैदाइश व मौत के वक़्त का हाल है जो दूसरे लोग अल्लाह का नाम लेकर इस आजिज़ व मजबूर पर अल्लाह के मुबारक नाम के ज़रिये रहमत की बारिश करते हैं। लेकिन ख़ुद उसकी ज़बान को नूर व सरवर बख़्शने का ज़रिया दुआ और कलिमे हैं, जिनकी तलक़ीन आप स०अ० ने फ़रमायी है फिर उससे हर वक़्त एक मुसलमान का वास्ता पड़ता है।

मौलाना मुहमद सानी हसनी रह०

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Postal Reg. No.
RBL/NP - 10

VOLUME-06

FEBRUARY 2014

ISSUE-01

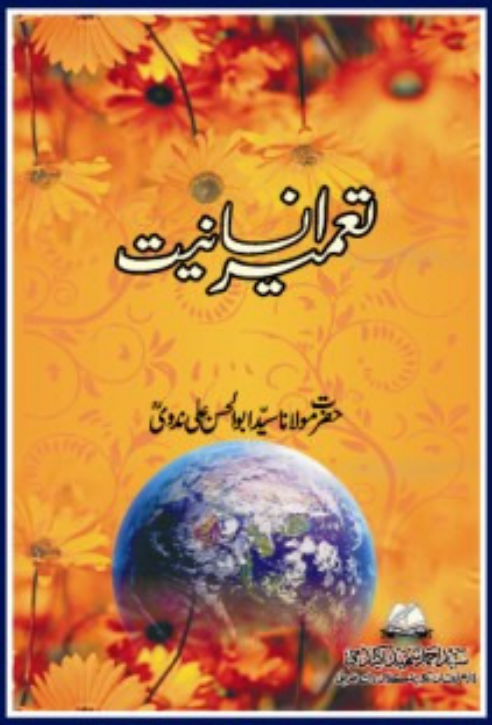

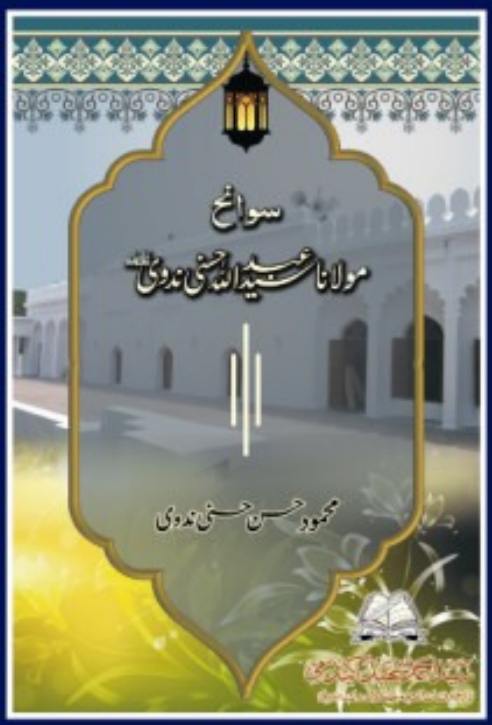

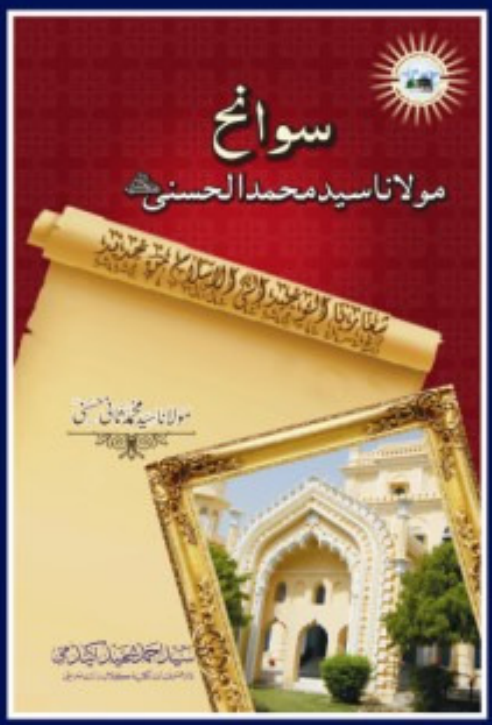

Sayyid Ahmad Shaheed Academy (Contact: 9919331295)

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile: 9918385097, 9918818558
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.